

- परिणामस्वरूप परिवर्तित पर्यावरणीय दशाओं का जीवमण्डल के जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- भौतिक पर्यावरण में इस तरह के मानव-जनित परिवर्तनों को पर्यावरण अवनयन या पर्यावरण अवक्रमण (Environmental degradation) कहते हैं।

पर्यावरण अवनयन तथा प्रदूषण

- पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ होता है मात्र मनुष्य के कार्यों तथा प्राकृतिक प्रक्रमों द्वारा स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्व स्तरों पर पर्यावरण की गुणवत्ता में हास तथा अवनयन।
- उदाहरण के लिए ज्वालामुखी उद्भेदन, भूकम्प, स्थलखण्ड में उल्थान एवं अवतलन, वलन एवं भ्रंशन, वायुमण्डलीय तूफान (यथा: टाइफून, हरीकेन, टारनैडो आदि), बाढ़ तथा सूखा, प्राकृतिक कारणों से वन में अग्नि का प्रकोप (दावानल), प्राकृतिक विद्युत विसर्जन (Lightning) एवं उपलवृष्टि (ओलापात), अति हिमपात, भौमिकीय अपरदन, भूमिस्खलन, एवालांश आदि प्राकृतिक कारक हैं।
- जिनके द्वारा स्थानीय एवं प्रादेशिक स्तरों पर पारिस्थितिक तंत्रों में अव्यवस्था उत्पन्न हो जाने से पर्यावरण अवनयन प्रारम्भ हो जाता है।
- पर्यावरण प्रदूषण स्थानीय या प्रादेशिक क्रियाकलाप है।
- स्पष्ट है कि सामान्य रूप में मानव के कार्यों द्वारा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता में हास को पर्यावरण प्रदूषण कहते हैं।
- परन्तु कभी-कभी मनुष्य के कार्यों का इतना व्यापक प्रभाव होता है कि पर्यावरण में विश्वस्तर पर अवनयन हो जाता है (यथा : ओजोन की अल्पता तथा हरितगृह प्रभाव)।
- इसके विपरीत पर्यावरण अवनयन (अवक्रमण) अत्यधिक विस्तृत क्षेत्रों से सम्बन्धित होता है तथा यह मानव के क्रियाकलापों तथा प्राकृतिक कारकों, दोनों के द्वारा होता है।
- परन्तु पर्यावरण प्रदूषण एवं पर्यावरण अवनयन में क्षेत्रीय मापक के आधार पर स्थापित यह अन्तर न्यायोचित नहीं है क्योंकि जैसा कि ऊपर व्यक्त किया गया है कि कुछ मानव-कार्य ऐसे भी हैं (ओजोन की अल्पता तथा विनाश,

हरितगृह प्रभाव, नाभिकीय सर्वनाश आदि) जो लघुतम समय में विश्वस्तरीय पर्यावरण में परिवर्तन करके उसकी गुणवत्ता को घटा सकते हैं, यहाँ तक कि समूल नष्ट कर सकते हैं।

- उदाहरण के लिए यदि विश्वस्तर पर नाभिकीय (दनबसमंत) युद्ध होता है तो वायुमण्डल में गैसों तथा धूल का इतना मोटा आवरण व्याप्त हो जायेगा कि सौरिक विकिरण तरंगों धरातल तक नहीं पहुँच पायेंगी, परिणामस्वरूप समस्त धरातलीय भाग हिमाच्छादित हो जायेगा (इसे नाभिकीय शरदकाल-Nuclear winter कहते हैं)
- पर्यावरण प्रदूषण एवं पर्यावरण अवनयन में पर्यावरण के विभिन्न संघटकों में होने वाली अव्यवस्था एवं असन्तुलन के आधार पर भी अन्तर स्थापित किया जा सकता है।
- पर्यावरण प्रदूषण के अन्तर्गत मान के क्रियाकलापों के पर्यावरण के किसी एक संघटक या किसी एक वर्ग के जीवों (खासकर मानव समुदाय) पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जबकि पर्यावरण अवनयन के अन्तर्गत मान के कार्यों तथा प्राकृतिक कारकों के द्वारा पर्यावरण के अधिकांश संघटकों तथा जीवों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों के कारण होने वाले समस्त परिवर्तनों को सम्मिलित किया जाता है।
- पर्यावरण अवनयन एक व्यापक पारिभाषिक शब्द है जिसका अर्थ होता है मनुष्य की क्रियाओं द्वारा पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता तथा पारिस्थितिकीय सन्तुलन में विभिन्न परिमाणों वाली अव्यवस्था एवं असन्तुलन का उत्पन्न हो जाना।
- जब पर्यावरण अवनयन नाजुक सीमा में इतना अधिक हो जाता है कि वह विभिन्न जीवों के लिए सामान्य रूप से तथा मनुष्य के लिए मुख रूप से घातक एवं जानलेवा हो जाता है तो उसे पर्यावरण प्रदूषण कहते हैं।
- स्पष्ट है कि पर्यावरण प्रदूषण पर्यावरण अवनयन की अन्तिम सीमा है।

पर्यावरण अवनयन के प्रकार

- प्राकृतिक कारकों या मान के कार्यों द्वारा उत्पन्न उन घटनाओं, जिनके द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण में शीघ्र परिवर्तन

होते हैं तथा पर्यावरण की गुणवत्ता एवं जीवधारियों को अपार क्षति होती है, को चरम घटना (Extreme event) या प्रकोप (Hazards) कहते हैं जिन्हें पुनः दो वृहद् वर्गों में विभाजित किया जाता है:

1. प्राकृतिक प्रकोप (यथा, टारनैडो, हरीकेन, टाइफून, ज्वालामुखी उद्भेदन, भूकम्प, बाढ़ तथा सूखा आदि)
 2. मानव-जनित प्रकोप (यथा, नाभिकीय सर्वनाश-Nuclear holocaust, रासायनिक युद्ध, रोगाणु युद्ध आदि)।
- पर्यावरण अवनयन के कारकों तथा पर्यावरण की गुणवत्ता में हास की मात्रा एवं स्तर के आधार पर पर्यावरण अवनयन को दो वर्गों में विभाजित करते हैं।
 1. चरम घटनायें तथा प्रकोप
 2. प्रदूषण
 - **प्रदूषण (Pollution):** (प्रदूषण प्रायः मानव के कार्यों द्वारा उत्पन्न होता है तथा सामान्यता इसे दो वर्गों में विभाजित करते हैं)।

भौतिक प्रदूषण (Physical Pollution)

- (मानव क्रियाकलापों के कारण पर्यावरण के भौतिक (अजैविक) संघटनों की गुणवत्ता में गिरावट को भौतिक प्रदूषण कहते हैं। इन्हें तीन भागों में विभाजित किया जाता है।
 1. स्थलीय प्रदूषण
 - मृदा अपरदन; मरूस्थलीकरण (Desertification) य मृदा प्रदूषण; लवणीवन (Salinization) आदि।
 2. जल प्रदूषण
 - सागरीय जल का प्रदूषण; भूमिगत जल का प्रदूषण; नदियों का प्रदूषण; झीलों का प्रदूषण आदि।
 3. वायु प्रदूषण
 - ओजोन परत की अल्पता; वायुमण्डल में हरितगृह गैसों (यथा-कार्बन डाइऑक्साइड) के सान्द्रण में वृद्धि; वायु की गुणवत्ता में हास आदि।

सामाजिक प्रदूषण (Social Pollution)

- सामाजिक प्रदूषण का उद्भव भौतिक एवं सामाजिक कारणों से होता है।
- इसे तीन उपभागों में विभाजित किया जाता है-
 1. जनसंख्या प्रस्फोट
 2. सामाजिक प्रदूषण
 - शैक्षिक एवं सामाजिक पिछड़ापन; अपराध; झगड़ा-फसाद; जातीय एवं साम्प्रदायिक दंगा-फसाद; चोरी एवं डकैती; युद्ध आदि।
 3. आर्थिक प्रदूषण
 - गरीबी, बेरोजगारी

पर्यावरण अवनयन की प्रक्रिया

- पर्यावरण एवं पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता एवं सन्तुलन को अव्यवस्थित करने वाले प्रक्रमों एवं क्रियाविधियों को पर्यावरण अवनयन के प्रक्रम कहते हैं।
- पर्यावरण की स्थिरता का तात्पर्य होता है पर्यावरण के प्रत्येक तत्व के उत्पादन एवं उपभोग में पूर्ण सन्तुलन।
- प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र में होम्योस्टैटिक प्रक्रिया होती है जिसके द्वारा प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र के भौतिक एवं अजैविक संघटकों में प्राकृतिक कारणों से होने वाले किसी भी परिवर्तन तथा पर्यावरण के किसी भी तत्व के उत्पादन-उपभोग अनुपात में प्राकृतिक कारकों द्वारा होने वाले परिवर्तनों का प्रतिसन्तुलन हो जाता है जिस कारण पर्यावरण एवं प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता एवं सन्तुलन की दशा बनी रहती है।
- जब मानव क्रियाकलापों द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण तथा पारिस्थितिक तंत्र में उत्पन्न परिवर्तनों का होम्योस्टैटिक प्रक्रिया द्वारा प्रतिसन्तुलन नहीं हो पाता है तो पर्यावरण अवनयन प्रारम्भ हो जाता है।
- वास्तव में पर्यावरण अवनयन समय प्रारम्भ होता है जबकि मनुष्य के कार्यों द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण में सतत् परिवर्तन होता रहता है तथा ये परिवर्तन इतने व्यापक होते हैं कि वे प्राकृतिक पर्यावरण उसे व्यवस्थित नहीं कर पाता है।

- उदाहरण के लिए किसी भी वन पारिस्थितिक तंत्र में यदि वनों उन्मूलन किया जाय तो वनों का पुनर्जन (Regeneration) सम्भव नहीं हो पाता है क्योंकि वनों के उन्मूलन के कारण खुली धरातलीय सतह का तीव्र गति से अपक्षय तथा अपरदन होता है।
- परिणामस्वरूप उर्वर मिट्टियाँ एवं पोषक तत्व धरातलीय वाहीजल (Surface runoff) द्वारा बहा लिये जाते हैं।
- पर्यावरण अवनयन के कारकों एवं प्रक्रियाओं का प्राकृतिक पर्यावरण या पारिस्थितिक तंत्र की लोचकता तथा सहनशक्ति के परिवेश में ही विचार किया जाना चाहिए।
- जब प्राकृतिक पर्यावरण की लोचकता मानव-जनित परिवर्तनों को आत्मसात करने में समर्थ होती है तो प्राकृतिक पर्यावरण का अवनयन नहीं हो पाता है परन्तु जब ये परिवर्तन पर्यावरण की लोचकता (Resilience) तथा सहन करने की क्षमता से अधिक हो जाते हैं तो पर्यावरण में अस्थिरता उत्पन्न हो जाती है तथा पर्यावरण अवनयन प्रारम्भ हो जाता है।
- इस तरह स्पष्ट है कि पर्यावरण अवनयन के प्रक्रम प्राकृतिक तथा मानवोद्भवी (Anthropogenic) दोनों हैं, परन्तु मानवोद्भवी प्रक्रमों द्वारा पर्यावरण में होने वाला अवनयन अधिक व्यापक तथा अधिक परिमाण वाला होता है।
- मनुष्य निम्न रूपों में पर्यावरण की अस्थिरता तथा पर्यावरण अवनयन में सहायक होता है:-
 - स्थानीय प्राकृतिक वनस्पतियों का पूर्णतः या आंशिक रूप में विनाश करके,
 - स्थान विशेष की वनस्पतियों की मौलिक प्रजातियों (Native species) को समूल नष्ट करके,
 - प्राकृतिक मौलिक वनस्पतियों को अन्य प्रजाति की वनस्पतियों द्वारा प्रतिस्थापित (Replacement) करके,
 - किसी स्थान में जन्तुओं की मौलिक प्रजातियों को अन्य बाहरी प्रजातियों द्वारा प्रतिस्थापित करके,
 - किसी भी क्षेत्र में विदेशी (exotic) पौधों या जन्तुओं या दोनों का प्रवेश कराके,
- प्राकृतिक पर्यावरण के किसी एक या कई संघटकों में परिवर्तन करके, यथा: उपयोग में परिवर्तनवन काट कर खेती करना,
- क्षेत्र विशेष में रासायनिक खादों, कीटनाशक एवं शाकनाशी रसायनों के छिड़काव से जहरीले रासायनिक तत्वों का प्रवेश कराके,
- औद्योगिक एवं नगरी विकास द्वारा वायुमण्डल की रासायनिक संरचना में परिवर्तन कराके।
- पर्यावरणीय प्रक्रमों में हेर-फेर (Manipulation) करके, यथा: वर्षा कराने के लिये मेघ बीजन (Cloud seeding), बादलों का विसरण एवं विपथगमन, ओलापात की रोकथाम आदि।
- मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध विदोहन के कारण प्राकृतिक पर्यावरण का व्यापक अवनयन हुआ है जिस कारण पर्यावरण की गुणवत्ता में अत्यधिक गिरावट आयी है।
- क्षयशील संसाधनों का आवश्यकता से कहीं अधिक विदोहन; ऐसे संसाधनों के विदोहन को जारी रखना जिनका भण्डार नाजुक स्थिति में पहुँच गया है तथा पूर्णतया समाप्त होने के कगार पर पहुँच गया है; ऐसे संसाधनों का अत्यधिक विदोहन जिनका पुनर्जन (Regeneration) अत्यन्त मन्द गति से सम्पादित होता है आदि मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के अविवेकपूर्ण विदोहन के कतिपय उदाहरण हैं।
- इस तरह विश्व स्तर पर मनुष्य के विदोहनात्मक एवं उत्पादन सम्बन्धी कार्यों; निरन्तर बढ़ते औद्योगीकरण एवं नगरीकरण तथा परिवहन के वाहनों में निरन्तर वृद्धि के कारण वायुमण्डल के प्राकृतिक गैसीय संघटन एवं विस्वस्तरीय ऊष्मा या विकरण सन्तुलन में भारी अव्यवस्था उत्पन्न हो गयी है क्योंकि विभिन्न स्रोतों से विसर्जित प्रदूषकों के कारण वायुमण्डल अब बोझिल हो चला है।
- बेशकीमती धरातलीय एवं भूमिगत जल संसाधन कारखानों से निकले अपशिष्ट पदार्थों, नगरों के मलजल, खेतों से विमोचित रासायनिक खादों, जहरीले रासायनिक तत्वों आदि के कारण बड़े पैमाने पर दूषित हो गया है तथा हो भी रहा है।

- विश्व के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में ताजे जल की गुणवत्ता में इतनी अधिक गिरावट आयी है कि बिना परिष्कृत एवं साफ किये ऐसे जल का पीने के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है।
- वनविनाश के कारण तीव्र गति से होने वाले मृदा अपरदन के कारण विश्व के प्रायः प्रत्येक देश में भूमि का अवनयन होने से उसकी गुणवत्ता में भारी कमी आयी है।
- व्यापक स्तर पर वनविनाश के कारण निम्न परिवर्तन हुए हैं:-
 - वर्षा के जल के भूमि में (रिसाव) में कमी होने से भूमिगत जल के पुनः पूरण (Recharge) में कमी होने से भूमिगत जल की अल्पता।
 - धरातलीय वाहीजल (Surface runoff) में अत्यधिक वृद्धि।
 - मृदा अपरदन में वृद्धि।
 - कृषि की उत्पादकता तथा सकल कृषि उत्पादन में भारी कमी।
 - मौसम सम्बन्धी दशाओं में परिवर्तन।
 - बाढ़ की आवृत्ति तथा परिमाण में वृद्धि।
 - प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र की जैविक विविधता में भारी कमी आदि।
- इन सब परिवर्तनों का सामूहिक प्रभाव यह होता है कि प्राकृतिक पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय सन्तुलन में अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है।
- इन समस्त प्रक्रियाओं का परिणाम यह होता है कि पर्यावरण में स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्व स्तरों पर अवनयन होने लगता है।
- यदि एक तरफ सामाजिक-आर्थिक, वैज्ञानिक, तकनीकी एवं प्रौद्योगिकीय विकास हुए हैं तो दूसरी तरफ विकट पर्यावरणी एवं पारिस्थितिकीय समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं।
- आर्थिक मनुष्य के विभिन्न कार्यों द्वारा जनित पर्यावरण अवनयन के कारण उत्पन्न पर्यावरण संकट आज विश्वस्तरीय चिन्ता का विषय बन गया है।
- पर्यावरण अवनयन एवं प्रदूषण से आम आदमी का इतना अधिक दुष्प्रभावित हुआ है कि वर्तमान समय में जनसाधारण में पर्यावरण की गुणवत्ता, प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों के विघटन एवं विनाश तथा प्राकृतिक संसाधनों की बढ़ती अल्पता के विषय में दिलचस्पी एवं जागरूकता बढ़ती है।
- प्रदूषण, पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण अब सर्वसाधारण में आम चर्चा के विषय बन चुके हैं।
- पर्यावरण अवनयन तथा उससे जनित पर्यावरणीय समस्याओं एवं पर्यावरण संकट के निम्न कारण हैं:-
 - मानव जनसंख्या में गुणोत्तर वृद्धि।
 - तीव्र गति से वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी विकास।
 - तीव्र गति से विकास के लिए महात्वाकांक्षी विकास योजनाओं एवं कार्यक्रमों का नियमन एवं क्रियान्वयन।
 - औद्योगिकरण, नगरीकरण एवं कृषि विकास में तेजी से वृद्धि।
 - समाज के दार्शनिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण।
 - मनुष्य का प्राकृतिक पर्यावरण एवं प्रकृति के प्रति शत्रुतापूर्ण निर्दयी व्यवहार।
 - जनसाधारण में पर्यावरण बोध तथा पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूकता एवं जानकारी की कमी।
 - निर्धनता।
 - कुछ देशों में कुछ वर्गों में आवश्यकता से अधिक समृद्धि, अर्थात् असमान आर्थिक विकास।
 - प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण एवं लोलुपतापूर्ण विदोहन आदि।

पर्यावरणीय समस्याओं एवं पर्यावरण अवनयन के कारण

- पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय (Ecological) परिवर्तनों के कारण उत्पन्न पर्यावरण संकट (Environmental crisis) वास्तव में आर्थिक एवं प्रौद्योगिकी मनुष्य (Economic and technological man) की विकासीय प्रक्रियाओं का परिणाम है।
- पर्यावरण के अध्ययन का उद्देश्यपरक (Teleological) उपागम इस धार्मिक विचारधारा पर आधारित है कि मनुष्य प्रकृति तथा सभी जीवों में श्रेष्ठतम है।

धार्मिक एवं दार्शनिक कारक

- इस धार्मिक विचारधारा (जुडो-क्रिश्चियन धार्मिक परम्परा) के अनुसार प्रकृति की प्रत्येक वस्तु का निर्माण मनुष्य के उपयोग के लिए होता है।
- इस विचारधारा से प्रभावित होकर मनुष्य ने प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध विदोहन करना प्रारम्भ कर दिया।
- इस विचारधारा से प्रभावित होने के कारण ही पश्चिमी देशों में तथा उनके अधीन अन्य उपनिवेशों में प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से विदोहन प्रारम्भ हो गया।
- अधिकांश वैज्ञानिकों का यह मत है कि वर्तमान समय में पर्यावरण अवनयन एवं पर्यावरणीय (पारिस्थितिकीय) संकट का मूल कारण उक्त धार्मिक विचारधारा ही है।
- प्रकृति एवं पर्यावरण से सम्बन्धित आर्थिक निश्चयवादी दृष्टिकोण (Economic deterministic viewpoint) भी इस विचारधारा पर आधारित है कि मनुष्य का प्रकृति पर पूर्ण प्रभुत्व होता है तथा आर्थिक एवं औद्योगिक विस्तार एवं विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का भरपूर उपभोग होना चाहिए।
- इस विचारधारा के अनुसार सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक स्थिरता के लिए आर्थिक विकास का होना परम आवश्यक है। आर्थिक विकास की तुलना में पर्यावरण अवनयन एवं प्रदूषण सामाजिक दृष्टि से कम महत्वपूर्ण हैं (C.C. Park, 1980)।
- इस विचारधारा के कारण प्राकृतिक संसाधनों का पश्चिमी देशों एवं उनके उपनिवेशों में धुंआधार विदोहन होने से मौजूदा अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो गयी हैं।
- प्रकृति एवं पर्यावरण से सम्बन्धित पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण (Ecological viewpoint) के अनुसार मनुष्य प्रकृति तथा पर्यावरण का अभिन्न अंग होता है तथा यह विचारधारा मनुष्य एवं पर्यावरण के बीच सौहार्दपूर्ण एवं सहजीवी सम्बन्ध (Symbiotic relationship) पर बल देती है।
- वास्तव में इस विचारधारा की मान्यता है कि मनुष्य एवं प्रकृति के बीच सौहार्दपूर्ण तालमेल होना चाहिए न कि शत्रुता (There should be harmony and not hostility between man and nature)।
- यह विचारधारा प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण एवं नियंत्रित विदोहन तथा उपयोग, पर्यावरण प्रबन्धन के समुचित कार्यक्रमों, नीतियों, रणनीतियों आदि पर अधिक बल देती है।

वनविनाश तथा पर्यावरण अवनयन

- वन किसी भी राष्ट्र की जीवन रेखा (Life line) हैं क्योंकि राष्ट्र विशेष के समाज की समृद्धि तथा कल्याण उस देश की स्वस्थ एवं समृद्ध वन सम्पदा पर प्रत्यक्ष रूप से आधारित होता है।
- वन प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र के जैविक संघटकों में से एक महत्वपूर्ण संघटक है तथा पर्यावरण की स्थिरता तथा पारिस्थितिकीय सन्तुलन उस क्षेत्र की वन सम्पदा की दशा पर आधारित होता है।
- वर्तमान आर्थिक मानव ने प्राकृतिक वनस्पतियों के पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय महत्व की भुला दिया है तथा उनका इतनी तेजी से सफाया किया है स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्व स्तरों पर अनेक पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय समस्याएँ उत्पन्न हो गयी हैं।
- मृदा अपरदन में वृद्धि; बाढ़ों की आवृत्ति तथा विस्तार में वृद्धि; वर्षा में कमी के कारण सूखे की घटनाओं में वृद्धि; जन्तुओं की कई प्रजातियों का विलोपन आदि घटनाएँ वनोन्मूलन से ही आबद्ध हैं।
- पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से प्रत्येक देश के समस्त भौगोलिक क्षेत्रफल के कम से कम एक तिहाई भाग पर घना वनावरण होना चाहिए परन्तु इस पारिस्थितिकीय नियम का प्रत्येक देश में उल्लंघन किया गया है।
- उष्ण एवं उपोष्ण कटिबन्धों में स्थिति कई विकासशील देशों में जनसंख्या में अपार वृद्धि होने के कारण कृषि क्षेत्रों में विस्तार करने के लिए उनके वन क्षेत्रों के एक बड़े भाग का सफाया किया जा चुका है।

वन विनाश के कारण

- स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्वस्तरों पर वन विनाश के निम्न कारण बताये जा सकते हैं:-

वनभूमि का कृषि भूमि में परिवर्तन

- मुख्य रूप से विकासशील देशों में मानव जनसंख्या में तेजी से हो रही वृद्धि के कारण यह आवश्यक हो गया है कि वनों के विस्तृत क्षेत्रों को साफ करके उस पर कृषि की जाये।
- इस प्रवृत्ति के कारण सवाना घास प्रदेश का व्यापक स्तर पर विनाश हुआ है क्योंकि सवाना वनस्पतियों को साफ करके विस्तृत क्षेत्रों को कृषि क्षेत्रों में बदला गया है।
- शीतोष्ण कटिबन्धी घास के क्षेत्रों (यथा : रूस के स्टेपी, उत्तरी अमेरिका के प्रेयरी, दक्षिणी अमेरिका के पम्पाज, दक्षिणी अफ्रीका के वेल्ड, तथा न्यूजीलैण्ड के डाउन्स) की घासों एवं वृक्षों को साफ करके उन्हें वृहद् कृषि प्रदेशों में बदलने का कार्य बहुत पहले ही पूर्ण हो चुका है।
- रूमसागरीय जलवायु वाले क्षेत्रों के वनों को बड़े पैमाने पर साफ करके उन्हें उद्यान कृषि (Horticulture) भूमि में बदला गया है।

स्थानान्तरी या झूमिंग कृषि

- झूमिंग कृषि दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी एशिया के पहाड़ी क्षेत्रों में वनों के क्षय एवं विनाश का एक प्रमुख कारण है।
- कृषि की इस प्रथा के अन्तर्गत पहाड़ी ढालों पर वनों को जलाकर भूमि को साफ किया जाता है तथा उस भूमि पर कुछ वर्षों तक खेती की जाती है।
- जब उस भूमि की उत्पादकता घट जाती है तो उसे छोड़ दिया जाता है तथा अन्यत्र नये भाग के वनों को साफ किया जाता है।

वनों का चरागाहों में परिवर्तन

- विश्व के रूम सागरीय जलवायु वाले क्षेत्रों एवं शीतोष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों एवं शीतोष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों खासकर उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका तथा अफ्रीका में डेयरी फार्मिंग में विस्तार एवं विकास के लिए वनों को व्यापक स्तर पर पशुओं के लिए चरागाहों में बदला गया है।

अतिचारण (Overgrazing)

- उष्ण तथा उपोष्ण कटिबन्धी एवं शुष्क तथा अर्द्ध शुष्क प्रदेशों के सामान्य घनत्व वाले वनों में पशुओं को चराने से वनों का क्षय हुआ है तथा हो रहा है।

- इन क्षेत्रों के विकासशील एवं अविकसित देशों में दुधारू पशुओं की संख्या तो बहुत अधिक है परन्तु उनकी उत्पादकता निहायत कम है।
- ये अनार्थिक पशु विरल तथा खुले वनों में भूमि पर उगने वाली झाड़ियों, घासों तथा शाकीय पौधों को चट कर जाते हैं, साथ ही साथ ये अपनी खुर्शों से भूमि को इतना रौंद देते हैं कि उगते पौधे नष्ट हो जाते हैं तथा नये बीजों का अंकुरण तथा छोटे पौधों का प्रस्फुटन नहीं हो पाता है।
- अधिकांश देशों में भेड़ों के बड़े-बड़े झुण्डों ने तो घासों का पूर्णतया सफाया कर डाला है।

वनाग्नि (Forest fires)

- प्राकृतिक कारणों से या मानव-जनित कारणों से वनों में आग लगने से वनों का तीव्र गति से तथा लघुतम समय में विनाश होता है।
- वनाग्नि के प्राकृतिक स्रोतों में वायुमण्डलीय बिजली सर्वाधिक प्रमुख है।
- मनुष्य भी जाने एवं अनजाने रूप में वनों में आग लगाता है।
- मनुष्य कई उद्देश्यों से वनों को जलाता है-कृषि भूमि में विस्तार के लिए; झूमिंग कृषि के तहत कृषि कार्य के लिए; घास की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए आदि।
- वनों में आग लगने के कारण वनस्पतियों के विनाश के अलावा भूमि कड़ी हो जाती है, परिणामस्वरूप वर्षा के जल का जमीन में रिसाव बहुत कम होता है तथा धरातलीय वाही जल (Surface runoff) में अधिक वृद्धि हो जाती है, जिस कारण मृदा अपरदन में तेजी आ जाती है।
- वनों में आये दिन आग लगने से जमीन पर पत्तियों के ढेरों में रहने वाले सूक्ष्म जीव मर जाते हैं।

लकड़ी की कटाई (Lumbering)

- घरेलू एवं व्यापारिक उद्देश्यों के लिए लकड़ी की प्राप्ति के लिए पेड़ों की कटाई वनों के विनाश का वास्तविक कारण है।
- तेजी से बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिक एवं नगरीकरण में तीव्र गति से वृद्धि के कारण लकड़ियों की मांग में दिनोदिन वृद्धि होती जा रही है।

- परिणामस्वरूप वृक्षों की कटाई में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है।
- भूमध्य रेखीय सदाबहार वनों का प्रति वर्ष 20 मिलियन हेक्टेयर की दर से सफाया हो रहा है।
- पिछली शताब्दी के आरम्भ से ही वनों की कटाई इतनी तेज गति से हुई है कि अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ पैदा हो गयी हैं।
- विकासशील एवं अविकसित देशों में ग्रामीण जनता द्वारा नष्ट प्राय एवं अवक्रमित वनों में पशुओं के लिए चारा एवं जलाने की लकड़ी के अधिक से अधिक संग्रह करने से बचाव वन भी नष्ट होता जा रहा है।
- कई देशों में प्राइवेट ठेकेदारों ने सरकारी अधिकारियों की सांठ-गांठ से वनों का अपने निहित आर्थिक फायदे के लिए निर्ममता के साथ विनाश किया है और यह कार्य अब भी जारी है।
- भारत में वन विनाश का यह कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनायें

- बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनाओं के कार्यान्वयन के समय विस्तृत वन क्षेत्र का क्षय होता है क्योंकि बांधों के पीछे निर्मित वृहद् जलभण्डारों में जल के संग्रह होने पर वनों से आच्छादित विस्तृत भू-भाग जलमग्न हो जाता है जिस कारण न केवल प्राकृतिक वन सम्पदा समूल नष्ट होती है वरन् उस क्षेत्र का पारिस्थितिकीय सन्तुलन ही बिगड़ जाता है।

जीवीय कारकों के द्वारा (By Biological Factors)

- वनों के विस्तृत भागों की कृषि भूमियों में परिवर्तन के कारण वन क्षेत्रों में भारी कमी होने से बचे हुए वन क्षेत्रों पर मवेशियों (पालतू जानवरों) एवं वन्य जीवों का भार अधिक बढ़ गया है।
- वर्तमान वन क्षेत्रों के आस-पास स्थित खेतों में रासायनिक खादों, कीटनाशी एवं शाकनाशी रसायनों के प्रयोग के कारण इन खेतों में स्थित सूक्ष्म जीवों (यथा, दीमक, कीट आदि) का वनों में पलायन हो गया है।
- ये सूक्ष्म जीव वनों में पौधों तथा वृक्षों को नाना प्रकार से क्षति पहुँचाते हैं।

वनविनाश का पर्यावरण पर प्रतिकूल

प्रभाव

- वन विनाश के कारण निम्न समस्याएँ उत्पन्न होती हैं—तीव्र मृदा अपरदन, नदियों के अवसाद भार में वृद्धि, नदियों की तलियों तथा जलभण्डारों का भराव, बाढ़ तथा सूखें की आवृत्ति (Frequency) तथा तीव्रता में वृद्धि, वर्षा के वितरण प्रारूप में परिवर्तन, हरितगृह प्रभाव की तीव्रता में वृद्धि, वायुमण्डलीय तूफानों के विनाशकारी बल में वृद्धि आदि।
- वनों के अभाव में मानव-जनित कार्बन डाइऑक्साइड की अतिरिक्त मात्रा का अवशोषण नहीं हो पायेगा, जिस कारण वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में निरन्तर वृद्धि होने के कारण हरितगृह प्रभाव में वृद्धि होने से भूतल एवं निचले वायुमण्डल का ऊष्मा सन्तुलन अव्यवस्थित हो जायेगा।
- वन विनाश के कारण वर्षा की जल बूँदें पूर्ण गतिज ऊर्जा (Kinetic energy) के साथ धरातलीय भाग पर प्रहार करती हैं जिस कारण नदियों द्वारा अपरदन बढ़ जाता है।
- मृदा अपरदन में वृद्धि के कारण नदियों के अवसाद भार (Sediment Load) में वृद्धि हो जाती है जिस कारण नदियों की तली का तेजी से भराव होने लगता है।
- इस प्रक्रिया के कारण नदियों में जल धारण की क्षमता घट जाने से बाढ़ का प्रकोप बढ़ जाता है।
- अर्द्ध शुष्क एवं शुष्क प्रदेशों में वनस्पतियों के विनाश के कारण वायु अपरदन एवं मरूस्थलों के विस्तार में वृद्धि हो जाती है।
- वन विनाश के कारण कई प्रकार के पौधों एवं जन्तुओं के प्राकृतिक आवासों के नष्ट हो जाने से प्रभावित क्षेत्र में पारिस्थितिकीय असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है।

वन संरक्षण के उपाय

- सामान्य तौर पर वनों के संरक्षण के उपायों में निम्न पक्षों को सम्मिलित किया जाता है:
 - बचे हुए वन क्षेत्रों का पूर्ण रक्षण;

- वनों की कटाई में वैज्ञानिक एवं विवेकपूर्ण विधियों का प्रयोग तथा
- वन क्षेत्रों में वृद्धि ताकि प्रत्येक देश के सकल भौगोलिक क्षेत्रफल के लगभग 33 प्रतिशत भाग पर वनों का स्वस्थ आवरण हो सके।
- इस कार्य के लिए नयी बंजर भूमियों तथा वन विनाश से प्रभावित क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर वनरोपण का कार्यक्रम युद्ध स्तर पर चलाना होगा।
- संयुक्त राज्य अमेरिका के समन्वित संरक्षण शोध संगठन (ICR = Integrated Conservation Research) ने UNESCO ds MAB (Man and Biosphere) कार्यक्रम के सहयोग से वनों के संरक्षण के लिए कई व्यापक कार्यक्रम चलाया है।
- ICR के वनों के संरक्षण के कार्यक्रमों के निम्न उद्देश्य हैं:
 - उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्रों के विकासशील देशों के वनों में वृक्षों की प्रजातियों की विविधता को सुरक्षित रखना, तथा
 - सरकारी संरक्षण में वन क्षेत्रों में विस्तार करना।
- इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए निम्न कदम उठाये जाने चाहिए:
 - सरकार द्वारा वनों के संरक्षण के लिए प्रभावी एवं कारगर कानून का निर्माण करना।
 - जनसाधारण में वनों के महत्व के प्रति दिलचस्पी एवं जागरूकता पैदा करना।
 - अधिकांश देशों की पहले से ही अपनी-अपनी राष्ट्रीय नीतियाँ हैं तथा वनों के विनाश के खिलाफ सरकारी कानून भी है। परन्तु इसके होते हुए भी वनों का विनाश तेजी से हो रहा है।
 - वनों के समुचित प्रबन्धन तथा संरक्षण के लिए भारत की भी राष्ट्रीय वन नीति है कि जिसके निम्न आधारभूत नियम हैं:-
 1. कार्यात्मक आधार पर वनों का वर्गीकरण, यथा: संरक्षित वन (Protected forests), आरक्षित वन (Reserved forests), ग्राम्य वन आदि।
 2. आम जनता के कल्याण हेतु स्थान विशेष की भौतिक एवं जलवायु सम्बन्धी दशाओं में परिमार्जन एवं सुधार के लिए वनरोपण द्वारा वन क्षेत्रों में विस्तार करना।
 3. पशुओं के लिए चारे, कृषि के उपकरणों के लिए लकड़ी तथा वनों के पास रहने वाले लोगों के लिए जलावन लकड़ी की समुचित आपूर्ति की व्यवस्था करना।
 4. वनों को साफ करके कृषि क्षेत्रों में व्यापक विस्तार का विरोध करना।
 5. वन क्षेत्रों में विस्तार के लिए व्यापक स्तर पर वन रोपण करना ताकि देशों के समस्त भौगोलिक क्षेत्रफल के 33 प्रतिशत भाग पर वनावरण हो सके।
- ज्ञातव्य है कि भारतीय राष्ट्रीय वन नीति के तहत भारत सरकार का यह सख्त आदेश है कि वनों को काटकर वनभूमि को अन्य भूमि उपयोगों के लिए प्रयोग में न लाया जाय।
- यदि ऐसा करना अपरिहार्य हो जाता है (यथा, सड़क निर्माण, जलभण्डार तथा बांध निर्माण, कारखानों की स्थापना, भवन निर्माण आदि के लिए) तो सम्बन्धित प्रान्तीय सरकार की स्वीकृति आवश्यक होगी तथा वनक्षेत्र में होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति उतने ही भाग में वन लगाकर करनी होगी।
- परन्तु इस आदेश का शायद ही पालन हो पाता है। सरकारी (प्रान्तीय तथा केन्द्रीय) तंत्रों तथा निजी ठेकेदारों द्वारा इस आदेश का आये दिन उल्लंघन होता रहता है।
- स्पष्ट है कि मात्र सरकारी निदेशात्मक नियमों एवं कानूनों से ही वन विनाश को नहीं रोका जा सकता है वरन् यह भी आवश्यक है कि वन विनाश से उत्पन्न होने वाले दुष्प्रभावों के प्रति आम जनता को जागरूक किया जाये।
- इस सन्दर्भ में चिपको आन्दोलन तथा उत्तराखण्ड के रेनी ग्राम की महिलाओं द्वारा चलाया गया जन आन्दोलन सराहनीय एवं कारगर ठोस कदम है।
- रेनी ग्राम की महिलाओं ने वन विनाश के कारण उर्वर मिट्टियों के क्षय, पेय जल की आपूर्ति करने वाले जल के स्रोतों के सूखने, वर्षा में कमी, पशुओं के लिए चारे तथा जलावन लकड़ी में निरन्तर कमी आदि का मूक अवलोकन करने के बाद प्रकृति तथा वन सम्पदा की महत्ता को महसूस किया तथा उन्हें यह विश्वास हो गया कि वन विनाश द्वारा उत्पन्न पर्यावरण अवनयन तथा आर्थिक निर्धनता में गहरा सम्बन्ध है।

- परिणामस्वरूप रेनी ग्राम की महिलाओं ने वनों की कटाई के खिलाफ जेहाद छेड़ दिया। ठेकेदारों द्वारा पेड़ों की कटाई का इन्होंने खुलकर कई रूपों में विरोध किया यथा:-
 - सर्वप्रथम इन्होंने विनम्रता पूर्वक ठेकेदारों को पेड़ काटने से मना करना प्रारम्भ किया।
 - ठेकेदारों के न माने पर इन्होंने अनशन प्रारम्भ किया।
 - इससे भी काम न चलने पर ठेकेदारों की कुल्हाड़ियों को रोकने के लिए इन्होंने अपने को पेड़ों के चारों तरफ चिपकना प्रारम्भ कर दिया।
- ठेकेदारों के क्रोध तथा राजनैतिक दबाव रेनी की महिलाओं के इरादों को विचलित नहीं कर पाये। अन्ततः इनका आन्दोलन रंग लाया तथा रेनी के आस-पास की वन सम्पदा सुरक्षित हो गयी।
- इन्होंने वन विनाश से प्रभावित क्षेत्रों में ओक का रोपण करना प्रारम्भ किया। देखते-देखते सैकड़ों ग्रामों में वनरोपण का कार्य प्रारम्भ हो गया।
- भाट तथा सुन्दर लाल बहुगुणा का चिपको आन्दोलन तथा रेनी ग्राम की महिलाओं का वन बचाओं आन्दोलन पूरे भारत में फैल गया तथा कई पर्यावरणीय वर्ग एवं स्वयंसेवी संस्थाएँ देश के विभिन्न भागों में वन विनाश के खिलाफ जन आन्दोलन चलाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया।
- वन विनाश के खिलाफ कई पर्यावरणीय नारे लगाये जा रहे हैं यथा, 'पश्चिमी घाट को बचाओ', 'बीमार हिमालय की रक्षा करो', 'अस्वस्थ गंगा को बचाओ' आदि।
- रेनी ग्राम की महिलाओं द्वारा वनों के विनाश के विरुद्ध चलाया गया जन आन्दोलन अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के कई देशों में भी पहुँच गया।
- अमेजन बेसिन में वनों के बड़े पैमाने पर सामूहिक सफाया के खिलाफ व्यापक आन्दोलन प्रारम्भ हो चुका है।
- वनों से पेड़ों की कटाई विवेकपूर्ण तथा वैज्ञानिक तरीके से की जानी चाहिए। अर्थात् केवल प्रौढ़ तथा रोगग्रस्त पेड़ों की ही कटाई होनी चाहिए तथा अनिच्छित एवं अनार्थक वृक्षों की कटाई नहीं होनी चाहिए।
- वास्तव में पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से भी प्रौढ़ वृक्षों की कटाई वांछनीय होती है क्योंकि न काटे जाने पर भी इस तरह के वृक्ष एक निश्चित समय के बाद नष्ट हो जाते हैं।
- अधिक से अधिक बंजरभूमियों पर तथा वन विनाश के कारण वनविहीन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण किया जाना चाहिए।
- वनरोपण के समय यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि
 - कई प्रजातियों के वृक्षों का रोपण होना चाहिए क्योंकि पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से जैविक विविधता एकधान्य कृषि (Monoculture) की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होती है।
 - कम से कम भंगुर पर्यावरण (Fragile environment) वाले क्षेत्रों में वनरोपण के लिए पौधों का चयन व्यापारिक महत्व के स्थान पर पारिस्थितिकीय महत्व के आधार पर किया जाना चाहिए।
- उदाहरण के लिए हिमालय प्रदेश में पाइन की अपेक्षा ओक पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होता है।
 - वनरोपण के समय उन्हीं वृक्षों का रोपण होना चाहिए जो स्थान विशेष की पर्यावरणीय दशाओं के अधिक अनुकूल हों। (भारत के सभी प्रदेशों में यूकैलिप्टस वृक्ष का बड़े पैमाने पर रोपण नहीं किया जाना चाहिए।)
 - प्राकृतिक वनक्षेत्रों के स्थान पर फलों के बागान नहीं लगाना चाहिए।
- हिमालय प्रदेश के कई क्षेत्रों में खासकर हिमाचल प्रदेश में वनों को काट कर सेब की खेती के कारण स्थानीय पर्यावरण को भारी नुकसान हुआ है। सेब की खेती का वन क्षेत्रों पर दोतरफा कुप्रभाव होता है।
 - सेब की खेती के लिए वनों को काटकर भूमि प्राप्त की जाती है।
 - प्रतिवर्ष सेबों की पैकिंग के लिए अधिकाधिक लकड़ियों की आवश्यकता पड़ती है। एक अनुमान के अनुसार एक हेक्टेयर भूमि पर सेब की खेती के लिए 7 से 10 हेक्टेयर वनभूमि का विनाश होता है।

- संयुक्त राज्य अमेरिका के ICR (Integrated Conservation Research) ने वनों की हालत के सुधार के लिए निम्न कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर जोर दिया है:
- कृषिवानिकी (Agroforestry) का व्यापक स्तर पर विस्तार;
- मानवजाति वनस्पति विज्ञान (Ethnobotany) पर जोर, तथा
- प्राकृतिक इतिहास से सम्बन्धित पर्यटन उद्योग पर जोर।

कृषि विकास एवं पर्यावरण अवनयन

- मनुष्य के आधुनिक वैज्ञानिक तकनीक में विकास, प्रगति प्रौद्योगिकी, रासायनिक खादों के उत्पादन तथा उपभोग में वृद्धि, सिंचाई के साधनों एवं सुविधाओं में वृद्धि तथा विस्तार, अधिक उत्पादन वाले बीजों के विकास आदि के माध्यम से कृषि में पर्याप्त विस्तार एवं विकास (कृषि क्षेत्रों में विस्तार, कृषि की उत्पादकता में वृद्धि तथा नेट कृषि उत्पादन में वृद्धि) किया है तथा निरन्तर बढ़ती मानव जनसंख्या के कारण बढ़ती खाद्यान्नों की मांग की पूर्ति तो कर दी है परन्तु साथ ही साथ घातक पर्यावरणी समस्याओं को भी जन्म दिया है।
- आधुनिक 'आर्थिक' एवं 'प्रौद्योगिकी मानव' उस चौराहे पर खड़ा है जिसके चारों ओर खतरा ही खतरा है।
- कृषि में तेजी से विस्तार होन से पर्यावरण में निम्न रूपों में अवनयन होता है:-
 - वनविनाश तथा सम्बन्धित भूमि उपयोग में परिवर्तन होने से।
 - खेतों में रासायनिक खादों, कीटनाशी एवं शाकनाशी रसायनों के प्रयोग से।
 - सिंचाई की सुविधाओं एवं सिंचाई की मात्रा में वृद्धि होने से।
 - जैविक समुदायों में परिवर्तन होने से आदि।
- विकासशील देशों में मानव जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण खाद्यान्नों की मांग में तेजी से वृद्धि हो रही है। इस समस्या का निदान दो रूपों में हो सकता है:-
 1. कृषिक्षेत्रों में विस्तार तथा विस्तृत कृषि द्वारा।
 2. कृषि भूमि की उत्पादकता में वृद्धि एवं गहन कृषि द्वारा।
- कृषि क्षेत्रों में भावी विस्तार वनों के सफाया द्वारा ही सम्भव हो सकता है।
- रूस के स्टेपी, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा के प्रेयरी, दक्षिणी अमेरिका के पम्पाज, दक्षिणी अफ्रीका के वेल्ड तथा न्यूजीलैण्ड के डाउन्स प्रभृति शीतोष्ण घास क्षेत्रों को व्यापक स्तर पर साफ करके कृषि क्षेत्रों में बदला गया है।
- इस प्रक्रिया द्वारा मानव समाज का यद्यपि पर्याप्त कल्याण हुआ है (कृषि उत्पादों खासकर खाद्यान्नों के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि होने से विश्व में खाद्यान्नों की आपूर्ति में बढ़ोतरी हुई है) परन्तु साथ ही साथ इन क्षेत्रों में पारिस्थितिकीय सन्तुलन में अव्यवस्था भी उत्पन्न हुई है।
- इन क्षेत्रों में एकधान्य कृषि (Monoculture) के कारण जन्तुओं की कई प्रजातियों का विलोपन (Extinction) भी हुआ है।
- इसी तरह रूससागरीय प्रदेशों में मौलिक वनस्पति को साफ करके वृहत क्षेत्रों में उद्यान कृषि (Horticulture), अंगूर वाटिका (Vineyard) तथा चरागाहों का विस्तार तथा विकास किया गया है जिस कारण एक तरफ तो मौलिक एवं प्राकृतिक वन पारिस्थितिक तंत्र का विनाश हुआ है तो दूसरी तरफ मृदा अपरदन में वृद्धि हुई है।
- उष्ण एवं उपोष्ण प्रदेशों के कई देशों में स्थानान्तरण कृषि या झूमिंग कृषि के कारण लाखों वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र नष्ट हो चुके हैं।
- भारत में झूमिंग कृषि द्वारा प्रतिवर्ष 10,000 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र का विनाश होता है।

- आसाम तथा मेघालय के पहाड़ी क्षेत्रों में आलू की मांग की आपूर्ति हो गयी है परन्तु मृदा अपरदन में कई गुना वृद्धि हुई है, मौसम तथा जलवायु सम्बन्धी दशाओं एवं पारिस्थितिकीय सन्तुलन में भारी परिवर्तन हुए हैं।
- भारत के हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड के पहाड़ी जिलों में वनों को साफ करके सेब की कृषि के अपनाये जाने के कारण हिमालय के पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।
- सेब की एकधान्य कृषि (Monoculture) के कारण पारिस्थितिकीय सन्तुलन अव्यवस्थित हो जाता है क्योंकि अधिकांश प्राकृतिक पौधे, जन्तु तथा सूक्ष्म जीव नष्ट हो जाते हैं क्योंकि उनके आवासों का विनाश हो जाता है। सेब की पैकिंग के लिए पर्याप्त लकड़ी की आवश्यकता होती है।
- एक अनुमान के अनुसार एक हेक्टेयर सेब के बाग के फलों की पैकिंग के लिए 6 से 7 हेक्टेयर वन क्षेत्र की लकड़ियों की आवश्यकता होती है।
- सेब में लगने वाले स्कैब रोग के निवारण के लिए भारी मात्रा में कीटनाशी रसायनों का प्रयोग किया जाता है। इस जहरीले रसायन के कारण पहाड़ी क्षेत्रों का जल प्रदूषित हो जाता है।
- किसी भी क्षेत्र में लगातार गहरी कृषि के कारण मिट्टियों की उत्पादकता घट जाती है।
- द० पू० संयुक्त राज्य अमेरिका के अप्लेशियन के गिरिपद क्षेत्रों में लम्बी अवधि तक (सैकड़ों वर्ष) कपास की लगातार कृषि के कारण मृदा अपरदन में इतनी वृद्धि हुई है कि न केवल कपास की गुणवत्ता एवं उत्पादन में भारी हास हुआ है वरन् वहाँ की पारिस्थितिकीय दशाओं में भी अवनयन हुआ है।
- कृषि की उत्पादकता में वृद्धि के लिए रासायनिक खादों का भारी मात्रा में उपयोग किया जाता है।
- फसलें समस्त रासायनिक पोषक तत्वों का पूर्ण उपयोग नहीं कर पाती हैं। इस तरह अप्रयुक्त रासायनों का मिट्टियों में लगातार संचय होता रहता है।
- इन रसायनों का कुछ भाग वर्षा के जल के साथ बहकर तालाबों, झीलों तथा नदियों तक पहुँच जाता है जिस कारण जल प्रदूषण प्रारम्भ हो जाता है।
- कुछ रसायन रिसकर नीचे चले जाते हैं तथा भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं। इसी तरह खर-पतवार एवं फसलों के रोगों को दूर करने के लिए प्रयोग किये जाने वाले कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों के कारण मिट्टियों एवं विभिन्न स्त्रोंतों के जल (तालाब, झील तथा नदियों का जल एवं भूमिगत जल) का भारी प्रदूषण होता है।
- **उदाहरण:** के लिए, अमोनियम सल्फेट के अधिक प्रयोग के कारण मिट्टियों में सल्फेट आयन का सान्द्रण बढ़ता है जिस कारण मिट्टियों में अम्लता बढ़ जाती है। पोटैशियम एवं सोडियम नाइट्रेट्स के अधिक प्रयोग के कारण मिट्टियों में पोटैशियम एवं सोडियम आयन का सान्द्रण बढ़ जाता है। ये आयन स्थानान्तरित होकर (वर्षा के जल द्वारा) तालाबों, झीलों तथा नदियों के जल एवं भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं।
- कुछ नाइट्रेट सब्जियों, फलों तथा खाद्यानों के माध्यम से मानव शरीरों में पहुँचते हैं तथा ये रसायन रासायनिक अभिक्रिया द्वारा कैंसर रोग उत्पन्न कर सकते हैं।
- खेतों में रासायनिक तत्व वर्षा के जल के साथ बह कर तालाबों, झीलों तथा नदियों में पहुँचते हैं। इस तरह इन जल भण्डारों में रासायनिक पोषक तत्वों के लगातार भण्डारण के कारण कुछ पौधों में तेजी से वृद्धि होने लगती है (इस प्रक्रिया को पादप वृद्धि या पादप सुपोषण . Eutrophication कहते हैं) तथा अन्य पौधों तथा जीवों की मृत्यु हो जाती है।
- इस प्रक्रिया द्वारा जलभण्डारों का जल प्रदूषित हो जाता है तथा जैव ऑक्सीजन मांग (BOD) पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- भारत में हरितक्रान्ति के अन्तर्गत कृषि के प्रत्येक पक्ष में प्रगति हुई है।
- अधिक उत्पादन देने वाली फसलों के लिए गहरी सिंचाई की आवश्यकता होती है।
- इस हेतु नहरों का अधिक विकास किया गया है।
- नहरों द्वारा सिंचाई करने से एक तरफ तो कृषि उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है परन्तु दूसरी तरफ जलभराव के कारण लवणीकरण तथा क्षारीयकरण (Salinization तथा

Alkalization) की समस्याएँ उत्पन्न हुई है जिस कारण विस्तृत कृषि क्षेत्र ऊसर एवं बंजर भूमि हो गये हैं।

- नहरों द्वारा सिंचाई से उपजाऊ भूमि के बंजर एवं अनुत्पादक भूमि में परिवर्तन की प्रक्रिया को ऊसरीकरण कहते हैं।

नोट: राजस्थान में इन्दिरा नहर द्वारा गहरी सिंचाई के कारण जलभराव होने से विस्तृत कृषि क्षेत्र लवणीकरण द्वारा दुष्प्रभावित हुआ है।

जनसंख्या में वृद्धि तथा पर्यावरण अवनयन

- जनसंख्या में लगातार वृद्धि होने के कारण सीमित प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है जिस कारण प्राकृतिक संसाधनों के तेजी से परन्तु धुआधार विदोहन के कारण अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं।
- पर्यावरण अवनयन के निम्न महत्वपूर्ण मूल कारण हैं-
 - विश्व की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि।
 - नगरों में विस्तार तथा नगरों में जनसंख्या के सान्द्रण में सतत वृद्धि।
 - विश्व के विकसित एवं विकासशील प्रदेशों की जनसंख्या में तीव्र गति से बढ़ता अन्तराल।
 - नगर-ग्रामीण जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि आदि।
- जनसंख्यातिरेक (Overpopulation) के कारण आर्थिक निर्धनता का आविर्भाव होता है क्योंकि समस्त संसाधनों का उपयोग लोगों की निहायत आवश्यक आवश्यकताओं (खाना, कपड़ा एवं मकान) की पूर्ति के लिए ही किया जाता है।
- इस स्थिति के कारण प्राकृतिक संसाधनों का असन्तुलित विदोहन होता है।
- उदाहरण के लिए उष्ण एवं उपोष्ण प्रदेशों के अधिक जनसंख्या वाले गरीब देश अपने कीमती प्राकृतिक वन संसाधनों को विकसित देशों को बेच देते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों के सदाबहार वर्षा वन के क्षेत्रों में प्रति वर्ष 20 मिलियन हेक्टेयर वन भूमि का हास हो रहा है।

- अमेजन बेसिन के सदाबहार वर्षा वन क्षेत्र में प्रतिवर्ष 5 मिलियन हेक्टेयर वन भूमि का क्षय हो रहा है।

- लैटिन अमेरिका, अफ्रीका तथा दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी एशिया के अधिकांश विकासशील देशों में उनके विदेशी व्यापार को सन्तुलित करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से विदोहन हो रहा है जिस कारण प्राकृतिक स्थलाकृति का विस्तृत क्षेत्र बंजर भूमि में बदलता जा रहा है तथा कई भयावह पर्यावरणीय समस्याओं (यथा मृदा अपरदन में वृद्धि, बाढ़, सूखा आदि) का आविर्भाव हो रहा है।

औद्योगिक विकास एवं पर्यावरण अवनयन

- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में प्रगति के कारण इंग्लैण्ड में औद्योगिकरण सर्वप्रथम 1860 में प्रारम्भ हुआ तथा शीघ्र ही इसका विस्तार उत्तरी अमेरिका तथा यूरोप के देशों में हो गया।
- 1860 से वर्तमान समय तक विश्व के पश्चिमी देशों में औद्योगिक विकास अपनी चरम सीमा को छू गया है।
- विकसित देशों में औद्योगिक विकास ने मानव समाज को आर्थिक समृद्धि प्रदान की है, सामाजिक-आर्थिक संरचना को नया आयाम दिया है तथा लोगों को भौतिक सुख प्रदान किया है परन्तु इसने कई प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं को भी जन्म दिया है।
- औद्योगिकरण के दो प्रमुख संघटकों अर्थात् प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से विदोहन तथा औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव होते हैं जो पर्यावरण की गुणवत्ता को दुष्प्रभावित करते हैं:
 - वनों की कटाई के कारण वन क्षेत्रों में हास।
 - खनिज पदार्थों के खन के कारण धरातल का उत्खनन द्वारा बंजर भूमि में परिवर्तन।
 - भूमिगत जल एवं खनिज तेल के निष्कासन के कारण धरातलीय सतह में अवतलन आदि।
- कारखानों में वांछित उत्पादन के अलावा कुछ अनिच्छित उत्पाद भी निकलते हैं यथा-औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ, प्रदूषित जल, जहरीली गैस, रासायनिक अवक्षेप (Chemical precipitate), एयरोसॉल, धूल एवं राख तथा धूम्र आदि।

- औद्योगिक देशों ने कारखानों की चिमनियों से निकले प्रदूषकों का जल, मिट्टियों, भूमि तथा वायु में सान्द्रण इतना अधिक बढ़ा दिया है कि पर्यावरण प्रदूषण एवं अवनयन नाजुक सीमा को पार कर गया है तथा मानव समाज विनाश के कगार पर पहुँच गया है।
- किसी भी देश की आर्थिक प्रगति की रफ्तार को बढ़ाने के उद्देश्य से किया जाने वाला औद्योगिक विस्तार एवं विकास आर्थिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हो सकता है परन्तु उससे उत्पन्न होने वाले पश्चप्रभाव (After effects) निश्चय ही सामाजिक दृष्टि से अवांछनीय हैं।
- औद्योगिकरण से उत्पन्न प्रभाव शीघ्र परिलक्षित नहीं होते हैं परन्तु उनके संचयी प्रभाव (Cumulative effects) इतने विकट एवं भयावह होते हैं कि उनसे प्राकृतिक पर्यावरण का मौलिक स्वरूप ही बदल जाता है।
- वास्तव में औद्योगिकरण से उत्पन्न प्रभावशृंखलाबद्ध होते हैं जो निश्चय ही मानव समाज के लिए घातक होते हैं।
- औद्योगिकरण के अधिकांश प्रभाव पर्यावरण अवनयन एवं प्रदूषण से सम्बन्धित होते हैं।
- रासायनिक कारखानों से उत्पादित खादों एवं कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों के खेतों में प्रयोग के कारण आहारशृंखला (Food chains) तथा मिट्टियों के रासायनिक एवं भौतिक गुणों में भारी परिवर्तन हो जाते हैं।
- कारखानों से निकले अपशिष्ट पदार्थों के तालाबों, झीलों तथा जलाशयों के स्थिर जल एवं नदियों तथा सागरों में विमोचन के कारण जल प्रदूषित हो जाता है जिस कारण अनेक जीवों की मृत्यु हो जाती है तथा जलीय पारिस्थितिक तंत्रों का प्राकृतिक संतुलन अव्यवस्थित हो जाता है।
- जल को प्रदूषित करने वाले इन औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थों में निम्न को सम्मिलित किया जाता है—जल में पछोड़न (Tailings) की धुलाई तथा डम्पिंग (Dumping); अपशिष्ट आपक (Waste sludges) का सन्क्षेपण; असबेस्टस के कणों एवं रेशों का विमोचन तथा सान्द्रण; जहरीले मिथाइल रूप में पारे का विमोचन एवं सान्द्रण; तेल के टैंकरों से खनिज तेल का रिसाव तथा सागरीय जल की तह पर फैलाव (Oil Slicks); कांच का विमोचन एवं सान्द्रण आदि।
- निरन्तर बढ़ते औद्योगिक प्रसार के कारण अनेक प्रकार के प्रदूषकों का जन होता है यथा: क्लोरीन, सल्फेट आदि के आयन।
- इन आयनों का वाहित मल नालियों (Sewage effluents) द्वारा झीलों, तालाबों तथा नदियों में विमोचन होता रहता है जिस कारण जल प्रदूषित हो जाता है।
- विश्व के घने बसे तथा औद्योगिक रूप से विकसित प्रदेशों से होकर प्रवाहित होने वाली प्रायः सभी बड़ी नदियाँ अपने मौलिक प्राकृतिक रूप को खो चुकी हैं तथा वे अब कारखानों एवं महानगरों से निकले अपशिष्ट पदार्थों एवं मलजल को वहन करने वाली सीवर (Sewers) बनकर रह गयी हैं।
- कारखानों की चिमनियों से निकलने वाली विभिन्न गैसों, धूँओं तथा अन्य एयरोसॉल द्वारा पर्यावरण पर कई प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं।
- जीवाश्म ईंधनों (कोयला तथा खनिज तेल) के जलाने से निस्सृत CO₂ का वायुमण्डल में लगातार सान्द्रण हो रहा है जिस कारण वायुमण्डल के मौलिक गैसीय संघटन में परिवर्तन हो रहा है।
- ज्ञातव्य है कि औद्योगिक क्रान्ति के प्रारम्भ में (1860 ई०) वायुमण्डल में CO₂ का सान्द्रण 0.029 प्रतिशत (290 ppm) था जो बढ़कर 2000 ई० तक 0.0370 प्रतिशत (370ppm) हो गया।
- वायुमण्डल में CO₂ के सान्द्रण में वृद्धि होने से वायुमण्डल के हरितगृह प्रभाव (Greenhouse effects) में वृद्धि हो जाने से तापमान में वृद्धि हो जायेगी तथा पृथ्वी एवं वायुमण्डल की ऊष्मा बजट एवं संतुलन में परिवर्तन हो जायेगा।
- क्लोरोफ्लोरोकार्बन के वायुमण्डल में विमोचन द्वारा ओजोन परत में अल्पता होने से भी पृथ्वी के विकिरण एवं ऊष्मा संतुलन में भारी परिवर्तन होंगे क्योंकि ओजोन की अल्पता (Ozone depletion) के कारण सूर्य की पराबैंगनी किरणें धरातल तक पहुँच कर उसका तापमान बढ़ा देगी।
- इस तरह मानव-जनित स्रोतों से वायुमण्डल में CO₂ के सान्द्रण में वृद्धि तथा क्लोरोफ्लोरोकार्बन के कारण ओजोन के क्षय होने से भूतल एवं निचले वायुमण्डल के तापमान

में वृद्धि होने से पादप एवं जन्तु जीव को भारी क्षति होगी तथा मनुष्यों में चर्म कैंसर का जानलेवा रोग फैल जायेगा।

- कारखानों से चाहे या अनचाहे रूप में जहरीली गैसों के रिसाव एवं विमोचन के कारण प्राणघातक पर्यावरणी प्रकोप उत्पन्न हो जाते हैं जो सभी प्रकार के जीवों को विनष्ट कर देते हैं।
- भोपाल गैस त्रासदी (3-4 दिसम्बर, 1984) तथा युक्रेन में चेरनोबिल नाभिकीय विनाश (दिसम्बर, 1986) औद्योगीकरण एवं मनुष्य की असावधानी एवं उसकी आधुनिकतम प्रौद्योगिकीय असफलता से उत्पन्न होने वाले विनाशकारी प्रभाव के कतिपय उदाहरण हैं।
- भोपाल नगर में स्थित अमेरिकी यूनियन कार्बाइड के गैस संयंत्र से जहरीली मिथेन गैस (MIC-Methyle Iso-Cynate) के रिसाव के कारण 4000 से अधिक लोग पलक झपकते मौत के शिकार हो गये (सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार जहरीली गैसे से मरने वालों की संख्या 2500 गतायी गयी है)।
- अम्ल वृष्टि, नगरी धूम्र कोहरा, नाभिकीय सर्वनाश (Nuclear holocaust), नाभिकीय शरद (Nuclear winter) आदि औद्योगीकरण से उत्पन्न होने वाले घातक पर्यावरणीय प्रकोप (Hazards) हैं।

नगरीकरण एवं पर्यावरण अवनयन

- नये नगरों के निर्माण एवं पूर्वस्थित नगरों में विस्तार के कारण विकसित एवं विकासशील देशों में पर्यावरण प्रदूषण तथा अवनयन की कई समस्याएँ उत्पन्न हो गयी हैं।
- नगरी जनसंख्या में प्रस्फोट के कारण भवनों, सड़कों, गलियों, मलजल के नालों, बरसाती नालों, पक्की सतह, स्वचालित वाहनों (मोटर कार, ट्रक, बस, लारी, मोटर साइकिल, स्कूटर आदि), कारखानों की संख्या, नगरीय अपशिष्ट पदार्थों, एयरोसॉल, धूम्र, धूल, राख, कचरा, मलजल, दूषित जल, हानिकारक गैसों आदि में भारी वृद्धि होती है जिस कारण कई पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

नोट- दिल्ली के पास यमुना नदी अब एक मलजल वाहक (Sewage) बनकर रह गयी है क्योंकि दिल्ली शहर के 17 खुले बड़े नालों से प्रतिदिन 323 मिलियन गैलन

मलजल यमुना नदी में पहुँचता है जबकि दिल्ली के नगरमहापालिका निगम के दूषित जल के शोधन संयंत्रों (Treatment Plants) की सकल शोधन क्षमता 184 मिलियन गैलन प्रतिदिन है।

दिल्ली शहर में प्रवेश करने से पूर्व यमुना नदी के प्रति 100 मिलीलीटर जल में रोग फैलाने वाली बैक्टीरिया की संख्या 7500 होती है जबकि दिल्ली शहर के मल जल के नदी में विसर्जित हो जाने पर रोग फैलाने वाली बैक्टीरिया की संख्या बढ़कर 24 मिलियन हो जाती है।

- कानपुर के पास गंगा नदी नगरी एवं औद्योगिक स्त्रोतों से निकले प्रदूषकों के कारण इतनी अधिक प्रदूषित हो गयी है कि अब वहाँ पर इसका जल पीने के लिए उपयुक्त हो गया है।
- कारखानों की चिमनियों (मानव ज्वालामुखी) तथा स्वचालित वाहनों से भारी मात्रा में निस्सृत गैसों, धूल एवं एयरोसॉल का नगरों के ऊपर सान्द्रण होता है जिस कारण प्रदूषण गुम्बद (Pollution domes) का निर्माण होता है तथा वायु का बड़े पैमाने पर प्रदूषण होता है।
- दिल्ली शहर के प्रदूषण का 60 प्रतिशत भाग शहर में चलने वाले स्वचालित वाहनों द्वारा होता है।
- इस वाहनों से निकलने वाले तत्व कार्बन मोनोआक्साइड (जिसके द्वारा मनुष्य के शरीर में सांस की समस्या पैदा हो जाती है), हाइड्रोकार्बन; सल्फर डाइ आक्साइड; भारी मात्रा में निलम्बित कण (SPM- Suspended Particulate Matter); कांच आदि मानव शरीर को हानि पहुँचाते हैं।
- नागपुर स्थित राष्ट्रीय पर्यावरण शोध संस्थान (NEERI) के सर्वेक्षण की रपट के अनुसार दिल्ली, कोलकाता, मुम्बई, चेन्नई, अहमदाबाद, कोचीन, हैदराबाद, जयपुर, कानपुर, नागपुर आदि नगरों में वायु प्रदूषण का स्तर बहुत अधिक हो गया है।
- वायु में नाइट्रोजन तथा सल्फर के ऑक्साइड्स के सान्द्रण में निरन्तर आदि नगरों में वायु प्रदूषण का स्तर बहुत अधिक हो गया है।
- वायु में नाइट्रोजन तथा सल्फर के ऑक्साइड्स के सान्द्रण में निरन्तर वृद्धि के कारण अम्ल वर्षा का खतरा बढ़ता जा रहा है।

- एक अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि मुम्बई महानगरी में प्रतिदिन 1700 प्रदूषक वायु में सम्मिलित होते हैं। इनमें से 55 प्रतिशत प्रदूषकों का विसर्जन स्वचालित वाहनों द्वारा होता है।
- औद्योगिक नगरों में जाड़े के मौसम में तापीय प्रतिलोमन के समय कारखानों की चिमनियों से विसर्जित धूम्र कोहरे (Urban smogs) की उत्पत्ति होती है।
- संयुक्त राज्य अमेरिका के पेन्सिलवेनिया प्रान्त के डोनोरा का धूम्र कोहरा (26 अक्टूबर, 1948), बेल्जियम की म्यूज घाटी का धूम्र कोहरा (दिसम्बर, 1950) तथा लन्दन नगर का धूम्र कोहरा (1952) आदि जहरीले तथा प्राणघातक नगरीय धूम्र कोहरे के कतिपय उदाहरण हैं।
- नगरीकरण में वृद्धि के कारण धरातलीय सतह के जल एवं भूमिगत जल का बजट भी प्रभावित होता है।
- नगरीय क्षेत्रों में विस्तार के कारण उनके पास की सरिताओं में बाढ़ की आवृत्ति तथा विस्तार में वृद्धि हो जाती है क्योंकि पक्की सतह में वृद्धि होने से वर्षा के जल का भूमि में रिसाव तथा अन्तः संचरण (Infiltration) न होने के कारण धरातलीय वाहीजल (Surface runoff) में वृद्धि हो जाती है परिणामस्वरूप वर्षा का अधिकांश जल बहकर शीघ्र ही पास की सरिताओं में पहुँच जाता है।
- नगरों के केन्द्र में ऊष्मा द्वीप (Heat island) तथा नगरों के ऊपर प्रदूषण गुम्बद (Pollution dome) के निर्माण के कारण स्थानीय एवं क्षेत्रीय विकिरण एवं ऊष्मा संतुलन में परिवर्तन हो जाता है।
- नगरों की बढ़ती आबादी को पेय जल सुलभ कराने के लिए भूमिगत जल का अधिकाधिक विदोहन किया जाता है।
- परिणामस्वरूप धरातलीय सतह के नीचे बड़ी-बड़ी कोटरें (Cavities) बन जाती हैं, जिस कारण कभी-कभी धरातलीय सतह में धँसाव हो जाता है।
- शहर की आबादी को पेय जल देने के लिए भूमिगत जल का 75 मिलियन गैलन प्रतिदिन की दर से विदोहन होने से सतह के नीचे 5 मील चौड़े कोटर (समुद्र तल से 35 फीट नीचे) का निर्माण हो गया, परिणामस्वरूप सागर का खारा जल (लवणयुक्त जल) इस कोटर में प्रविष्ट हो गया जिस कारण भूमिगत जल भी नमकीन हो गया।
- परिणामस्वरूप नगर के अधिकारियों को सभी दूषित कुँओं को तत्काल बन्द करना पड़ा।
- नगरों में प्रतिदिन त्यजित ठोस अपशिष्ट पदार्थों, यथा-कूड़ा-कचरा सी भी कई पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
- विकसित देशों के महानगरों में नगरीय अपशिष्ट पदार्थों के संचयन, भण्डारण (Storage), परिवहन, शोधन तथा समुचित निस्तारण (Proper disposal) के प्रति अधिकाधिक ध्यान दिया जा रहा है परन्तु विकासशील देशों के नगरों में नगरीय अपशिष्ट पदार्थों के निस्तारण की समस्या का समाधान नहीं हो पाया है।
- नगरी जनसंख्या में वृद्धि के साथ नगरीय अपशिष्ट पदार्थों की मात्रा में भी तेजी से वृद्धि हो रही है।
- नागपुर स्थित राष्ट्रीय पर्यावरण शोध संस्थान (NEERI) की रपट के अनुसार कलकत्ता एवं बम्बई में प्रति व्यक्ति नगरीय अपशिष्ट पदार्थों अर्थात् कचरे का उत्पादन 0.5 किलोग्राम है जबकि देश के अन्य नगरों में यह मात्रा 0.15 से 0.35 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है।
- नगरों के विभिन्न स्थानों पर शहरी कचरा कई दिनों तक सड़ता रहता है, जिससे दुर्गन्ध निकलती रहती है। इन सड़ते कचरों के ढेरों से जहरीली गैसें भी निकलती हैं जिनसे वायु प्रदूषण होता है।

आधुनिक प्रौद्योगिकी तथा पर्यावरण

अवनयन

- प्रस्तर युग से लेकर वर्तमान समय तक मानव समाज के विकास में प्रौद्योगिकी की सदा अहम भूमिका रही है परन्तु प्रारम्भिक युगों में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी अधिक विनाशकारी नहीं थी क्योंकि उन दिनों प्रौद्योगिकी के प्रयोग का प्रमुख उद्देश्य था आम जनता को जीवन निर्वाह के लिए मात्र आवश्यक न्यूनतम वस्तुओं को सुलभ कराना।
- परन्तु वर्तमान प्रौद्योगिकी अधिक खतरनाक एवं विनाशकारी हो गयी है क्योंकि अब आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग का प्रमुख उद्देश्य है-प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से

विदोहन करना तथा मानव समाज के भौतिक स्तर को बढ़ाने के लिए इन संसाधनों से नाना प्रकार का उत्पादन करना। वास्तव में आधुनिक प्रौद्योगिकी का वृद्धि/सम्पन्नता की विचारधारा (Growth/affluence school) से गहरा सम्बन्ध है।

- यह विचारधारा निम्न पर सर्वाधिक जोर देती है—प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम विदोहन, तीव्र दर से आर्थिक विकास तथा मानव समाज के भौतिक स्तर में अत्यधिक वृद्धि।
- पश्चिमी दुनिया के औद्योगिक देशों की यह सम्पन्नता की विचारधारा ही उत्पादन प्रक्रिया को तेज करने के लिए वैज्ञानिक शोधों में पूर्ण क्रान्ति तथा अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी के विकास के लिए जिम्मेदार है।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी मानव समाज के प्रत्येक अंग (यथा, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक तथा सामाजिक) में प्रवेश कर चुकी है। यथा:
 - जुताई, निराई, बुवाई, सिंचाई तथा कटाई की बेहतर एवं उन्नत विधियों, उन्तशील बीजों, रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों के प्रयोग से कृषि में विकास।
 - अति प्रगत, अत्याधुनिक एवं अत्यधिक सक्षम मशीनों, कम्प्यूटरों तथा पूर्ण स्वचालन (Automation), प्राकृतिक संसाधनों के त्वरित एवं सक्षम विदोहन, तेज एवं सक्षम यातायात के वाहनों के प्रयोग द्वारा औद्योगिक विकास।
 - अति सुपरसोनिक युद्धक जेट विमान, जलयान, सुपरफास्ट ट्रेन आदि।
 - प्राणघातक हथियारों का निर्माण, यथा, ऐटम तथा हाइड्रोजन बम, नाभिकीय वारहेड, प्रक्षेपास्त्र, रासायनिक एवं जैविक बम आदि।
 - कम्प्यूटर, नाना प्रकार के सुने एवं दृश्य उपकरण (Audio-visual aids), हवाई छायाचित्र, उपग्रह इमेजेस आदि का विकास।
 - नाना प्रकार की विलासिता की सामग्रियों का उत्पादन, यथा: रेफ्रिजरेटर, एयरकण्डीशनर, हेयर ड्रायर, स्प्रे कैन डिस्पेन्सर, असंख्य प्रसाधन की सामग्रियाँ, सुपरसोनिक जेट विमान, वातानुकूलित मोटरकार आदि का निर्माण।

- मनुष्य प्रगत वैज्ञानिक तकनीकों तथा अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी के माध्यम से अपने लाभ के लिए मौसम सम्बन्धी दशाओं में परिवर्तन करने के लिए सक्षम हो गया है।

उदाहरण: के लिए अधिक वर्षा प्राप्त करने के लिए वह ठोस कार्बन डाइ ऑक्साइड तथा आयोडीन के प्रयोग से बादल बनाकर अतिरिक्त वर्षा करा सकता है।

- इस प्रक्रिया को मेघ बीजन (Cloud seeding) कहते हैं।
- मनुष्य उपलवृष्टि (Hailstorm) को रोकने में भी समर्थ हो गया है। बादलों को भगाने तथा वायुमण्डलीय तूफानों (चक्रवातों) के मार्गों को बदलने में भी मनुष्य सफल हो गया है।
- इस तरह मनुष्य वायुमण्डलीय प्रक्रमों में परिवर्तन करने लगा है। इन परिवर्तनों के कारण वायुमण्डलीय दशाओं में परिवर्तन होने से जीवमण्डल प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी की सहायता से मनुष्य नदियों पर बड़े-बड़े बांधों तथा जलभण्डारों के निर्माण करने में सक्षम हो गया है। इस क्रिया के निम्न दुष्परिणाम होते हैं:-
 - बड़े बांधों तथा जलाशयों के भार के कारण नीचे स्थित शैलों का सन्तुलन बिगड़ जाता है जिस कारण विनाशकारी भूकम्प का आविर्भाव होता है।
 - डेनवर का 1962 में (कोलैरैडो, संयुक्त राज्य अमेरिका), हूवर बांध के कारण मीड झील का भूकम्प (एरिजोना-नेवादा, संयुक्त राज्य अमेरिका), कैरिबा झील का भूकम्प (एरिजोना-नेवादा, संयुक्त राज्य अमेरिका), कैरिबा झील का भूकम्प (जाम्बिया, अफ्रीका), कोयना भूकम्प (11 दिसम्बर, 1967, सतारा जिला, महाराष्ट्र) आदि मानव द्वारा विकसित एवं प्रयुक्त आधुनिक प्रौद्योगिकी के कारण जनित भूकम्पों के कतिपय उदाहरण हैं।
 - टेहरी बांध परियोजना तथा सरदार सरोवर परियोजना का आज भी पर्यावरणवादियों द्वारा विरोध जारी है।
 - बड़े-बड़े जलभण्डारों के कारण विस्तृत प्राकृतिक वन क्षेत्र जलमग्न हो जाते हैं, जिस कारण प्रभावित क्षेत्र में पारिस्थितिकीय संतुलन बिगड़ जाता है एवं पर्यावरण अवनयन प्रारम्भ हो जाता है।

- गुजरात तथा मध्य प्रदेश प्रान्तों में नर्मदा घाटी परियोजना के अन्तर्गत इन्दिरा सरोवर तथा सरदार सरोवर परियोजनाओं का इन्हीं आधारों पर घोर विरोध किया जा रहा था।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए रासायनिक खादों तथा कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों का भारी मात्रा में प्रयोग करना पड़ता है।
- ये कृत्रिम रसायन एक तरफ तो कृषि उत्पादन में वृद्धि करते हैं परन्तु दूसरी तरफ मिट्टियों तथा जलाशयों, झीलों, नदियों के जल तथा भूमिगत जल को प्रदूषित भी करते हैं।
- विलासिता के उत्पादों यथा: रेफ्रिजरेटर, एयरकण्डिशनर, स्प्रे कैन डिस्पेन्सर, हेयर ड्रायर आदि के संचालन से एवं अग्नि बुझाने वाले यंत्रों के संचालन से भारी मात्रा में क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFC) तथा हैलन का वायुमण्डल में विमोचन होता है।
- इनके द्वारा ओजोन परत का क्षय होता है जिस कारण अधिक से अधिक मात्रा में सौर्यिक पराबैंगनी किरणों के धरातल तक पहुँचने पर तापमान में वृद्धि की सम्भावना है।
- धरातलीय तापमान में वृद्धि एवं पराबैंगनी किरणों के कारण मनुष्यों में चर्म कैंसर होने की सम्भावनों व्यक्त की गयी है।
- मशीनों को चलाने के लिए आवश्यक ऊर्जा के जन हेतु जीवाश्म ईंधनों के जलाने तथा स्वचालित वाहनों में खनिज तेल के जलाने से उत्पन्न CO₂ के वायुमण्डल में सान्द्रण में वृद्धि के कारण वायुमण्डल के हरितगृह प्रभाव (Greenhouse effects) में वृद्धि होने से पृथ्वी तथा निचले वायुमण्डल के विकिरण एवं ऊष्मा संतुलन में अव्यवस्था होने की भरपूर समस्या है।
- रासायनिक संयंत्रों से जहरीली गैसों के निकलने से न केवल वायु का प्रदूषण होता है वरन् मनुष्यों, पौधों तथा जन्तुओं की तत्काल मृत्यु भी हो जाती है तथा मनुष्य में कई पीढ़ियों तक अंग विकास होता रहता है।
- 3-4 दिसम्बर, 1984 को घटित भोपाल गैस त्रासदी तथा 1986 में युक्रेन के चरनोबिल स्थित नाभिकीय संयंत्र के फटने से उत्पन्न होने वाले प्राणघातक परिणामों के कतिपय उदाहरण हैं।
- औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाले अनेक जहरीले अपशिष्ट पदार्थ भी कई प्रकार की गम्भीर पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न करते हैं।
- औद्योगिक प्रतिष्ठानों से लगभग 2000 रसायनों का प्रतिवर्ष पर्यावरण में विमोचन होता है।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी के सर्वाधिक खतरनाक परिणामों में अनेक जहरीले रसायनों का उत्पादन (यथा-प्लास्टिक) आदि प्रमुख हैं।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी का सर्वाधिक खतरनाक पक्ष नाभिकीय अपशिष्ट पदार्थों (Nuclear wastes) को ठिकाने लगाने से सम्बन्धित है।
- पुनश्च, मनुष्य ने नाभिकीय युद्ध होता है तो उससे उत्पन्न नाभिकीय सर्वनाश (Nuclear holocaust) तथा नाभिकीय शरद (Nuclear winter) के कारण समस्त जीव जगत (पादप, जन्तु तथा मानव) का कुछ मिनट में ही सर्वनाश हो जायेगा।
- इस तरह मनुष्य ने एक तरफ तो आधुनिक प्रौद्योगिकी के विकास द्वारा अपने भौतिक एवं आर्थिक जीवन-स्तर को काफी ऊँचा किया है परन्तु दूसरी तरफ अपने पूर्ण विनाश की तैयारी भी कर रखी है।
- पर्यावरण अवनयन की समस्या के निदान के लिए उपाय-
 - प्रदूषण मुक्त पौद्योगिकी का विकास,
 - प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुंध विदोहन पर नियंत्रण,
 - वनविनाश से प्रभावित क्षेत्रों तथा अन्य बंजर भूमियों पर वनरोपण,
 - रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी एवं शाकनाशी रसायनों के उपयोग पर नियंत्रण,
 - अवनलिका (Gully) अपरदन से प्रभावित कृषि भूमियों का सुधार तथा संरक्षण।
 - ओजोन को विनष्ट करने वाले रसायनों के उत्पादन एवं उपभोग में भारी कमी।

- वायुमण्डल के हरितगृह प्रभाव को कम करने के लिए जीवाश्म ईंधनों के उपभोग में कमी तथा नियंत्रण।
- भूमण्डलीय ऊष्मन एवं जलवायु परिवर्तन के कारकों पर नियंत्रण।
- परमाणु शस्त्रों के उत्पादन पर पूर्णतया रोक।
- आमजनता को पर्यावरण के प्रति शिक्षित एवं जागरूक करना, आदि।



पर्यावरण प्रदूषण (ENVIRONMENT POLLUTION)



- आज मानव समाज को जिन प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, उनमें सर्वप्रमुख है- पर्यावरण असंतुलन। विश्व के प्रायः सभी देश चाहे वह विकसित हों या विकासशील, पर्यावरण असंतुलन और उससे जनित समस्याओं से दुष्प्रभावित हो रहे हैं। पर्यावरण असंतुलन से जहां एक ओर, वैश्विक ताप-वृद्धि ओजोन परत क्षरण तथा अम्ल वर्षा जैसी समस्याएं पैदा हुई हैं, वहीं दूसरी ओर, सूखा बाढ़, भूमि की उर्वरा-शक्ति में ह्रास, भूस्खलन, भू-क्षरण, रेगिस्तानीकरण तथा जल संकट जैसी समस्याएं भी पैदा हुई हैं। वस्तुतः विकास की अंधी दौड़ में हमने आर्थिक विकास के पर्यावरण पहलू को भुला दिया है। फलतः पर्यावरण का अनवरत ह्रास हमारे समक्ष एक संकट के रूप में प्रकट हुआ है अर्थात् पर्यावरणीय प्रदूषण की गंभीरता समस्या पैदा हो गयी है।

अर्थ (Meaning)

पर्यावरण प्रदूषण को निम्न शब्दों में परिभाषित किया गया है: “भूमि, वायु, जल, आदि जैविक मंडल के गुणों में मानव जीवन और संस्कृति के लिए उत्पन्न हानिकारक परिवर्तनों को प्रदूषण कहा जाता है।”

- सामान्यतः जैविक गुणों में थोड़ा बहुत परिवर्तन अथवा मिलावट तो होती ही रही है। किन्तु जब यह मिलावट जीवन के लिए हानिकारक हो, तभी उसे प्रदूषण कहा जायेगा अन्यथा नहीं।
- पर्यावरण में संतुलन स्वतः होता रहा है। पृथ्वी सतह के

ताप, वायुमंडलीय गैसीय तत्वों, सूर्य विकिरण आदि जलवायु को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों को प्रकृति अपने आप ही संतुलित करती है। किन्तु इस संतुलन की भी एक सीमा होती है। उसके बाद पर्यावरण दूषित होना आरंभ हो जाता है औद्योगीकरण, शहरीकरण व परमाणु ऊर्जा आदि के द्वारा हम लाभान्वित अवश्य हुए हैं परंतु इससे पर्यावरण संतुलन डगमगा गया है। पर्यावरण संतुलन के डगमगा जाने से इसके विभिन्न तत्वों-वायु, जल, ध्वनि, धूल आदि से प्रदूषण की समस्या गंभीर होती जा रही है।

- शहरों में वायु प्रदूषण एक बढ़ती समस्या बन गया है। औद्योगिक विकास के कारण औद्योगिक कचरों (Industrial Wastes) से पर्यावरण का प्रदूषण हो रहा है। परमाणु विज्ञान की प्रगति के कारण वातावरण में रेडियोएक्टिव (Radionactive) पदार्थों की अधिकता से वातावरण अत्यधिक दूषित हो रहा है अतः पर्यावरण की स्वच्छता अब एक ऐसी समस्या बन गयी है जिसका कहीं छोर ही दृष्टिगत नहीं होता है। स्वस्थ पर्यावरण की प्राप्ति अब इतनी जटिल होती है। कि आजकल पर्यावरण की स्वच्छता का नाम बदलकर ‘पर्यावरण का स्वास्थ्य’ (Environment Health) रख दिया गया है।

- मोटे तौर पर पर्यावरणीय क्षति को अग्रलिखित शीर्षकों के अंतर्गत अध्ययन कर सकते हैं-

- भूमि या मृदा प्रदूषण,
- जलप्रदूषण
- ध्वनिप्रदूषण, वनोन्मूलन या वन विकास।

- समुद्री प्लास्टिक, कीटनाशक, विद्युत चुम्बकीय, नाभिकीय, तापीय, ठोस अपाशिष्ट, जैव।

मृदा प्रदूषण

- **प्राकृतिक स्रोतों या मानव-जनित स्रोतों से मिट्टियों की गुणवत्ता में हास होने को मृदा प्रदूषण कहते हैं।** मृदा की गुणवत्ता में हास या अवनयन निम्न कारणों से होते हैं- तीव्र गति से मृदा-अपरदन, मिट्टियों में रहने वाले सूक्ष्म जीवों में कमी, मिट्टियों में नमी का आवश्यकता से अधिक या बहुत कम होना, तापमान में अत्यधिक उतार-चढ़ाव, मिट्टियों में ह्यूमस की मात्रा में कमी तथा मिट्टियों में विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों का प्रवेश एवं सान्द्रण।

मृदा प्रदूषण के कारण या स्रोत

मृदा प्रदूषण के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं:-

- **जैविक स्रोत :** मृदा-अपरदन के जैव स्रोत या कारकों के अंतर्गत उन सूक्ष्म जीवों तथा अवांछित पौधों को सम्मिलित किया जाता है जो मिट्टियों की गुणवत्ता तथा उर्वरता को कम करते हैं। इन्हें 4 वर्गों में बांटा गया है:
 1. मिट्टियों में पहले से मौजूद रोगजनक सूक्ष्म जीव,
 2. पालतू मवेशियों द्वारा गोबर आदि के माध्यम से परित्यक्त रोगजनक सूक्ष्म जीव,
 3. मनुष्यों द्वारा परित्यक्त रोगजनक सूक्ष्म जीव तथा
 4. आंतों में रहने वाली बैक्टीरिया तथा प्रोटोजोवा।
 उक्त स्रोतों से सूक्ष्म जीव मिट्टियों में प्रवेश करके उन्हें प्रदूषित करते हैं। ये सूक्ष्म जीव आहार श्रृंखला में भी प्रविष्ट होकर मानव शरीरों में पहुंच जाते हैं।
- **वायुजनित स्रोत:** ये वास्तव में वायु के प्रदूषण ही होते हैं। जिनका मानव ज्वालामुखियों (कारखानों की चिमनियों), स्वचालित वाहनों, ताप शक्ति, संयंत्रों तथा घरेलू स्रोत से वायुमंडल में उत्सर्जन होता है। इन प्रदूषकों का बाद में धरातलीय सतह पर अवपात होता है तथा ये विषाक्त प्रदूषक मिट्टियों में पहुंचकर उन्हें प्रदूषित कर देते हैं।
- **प्राकृतिक स्रोत:** मृदा प्रदूषक के भौतिक स्रोत का संबंध

प्राकृतिक एवं मानव-जनित स्रोतों से, मृदा- अपरदन तथा उससे जनित मृदा- अवनयन से होता है। अर्थात् अपरदन के कारण मृदा की गुणवत्ता में भारी कमी होती है। मिट्टियों के अपरदन के लिए उत्तरदायी प्राकृतिक कारकों के अंतर्गत निम्न को सम्मिलित किया जाता है:

- वर्ष की मात्रा तथा तीव्रता, तापमान तथा हवा, सैलिकीय कारक, वानस्पतिक आवरण आदि।
- **जैवनाशी रसायन स्रोत:** मृदा प्रदूषण का सर्वाधिक खतरनाक प्रदूषण विभिन्न प्रकार के जैवनाशी रसायन (कीटनाशी, रोगनाशी तथा शाकनाशी कृत्रिम रसायन) हैं। जिनके कारण बैक्टीरिया सहित सूक्ष्म जीव विनष्ट हो जाते हैं। परिणामस्वरूप मिट्टियों की गुणवत्ता में भारी गिरावट आ जाती है। ज्ञातव्य है कि जैवनाशी रसायन पहले मिट्टियों में स्थित कीटाणुओं तथा अवांछित पौधों को विनष्ट करते हैं। तत्पश्चात् मिट्टियों की गुणवत्ता को कम करते हैं। जैवनाशी रसायनों को रेंगती मृत्यु कहा जाता है।

मृदा या भूमि प्रदूषण का प्रभाव (Effects of Land Pollution)

भूमि प्रदूषण के कई प्रभाव हमें देखने को मिलते हैं मृदा भूमि-प्रदूषण के निम्नलिखित प्रभाव हैं-

- धरती के प्रदूषकों की उड़ती हुई धूल हमारे शरीर में दमा और गले के अनेक रोगों को जन्म देती है।
- कीटनाशक औषधियों के अत्यधिक प्रयोग से मछलियाँ और पक्षियों पर बड़े घातक प्रभाव देखने को मिले हैं। अनेक पक्षी एवं मछलियाँ इनके प्रभाव से मर चुकी हैं।
- भूमि प्रदूषण से अनेक रोगों को जीवाणुओं और विषाणुओं का जन्म होता है। जो मानव में अनेक प्रकार के रोग पैदा करते हैं।
- खानों से हुए भूमि के दुरुपयोग से, अनेक बांध बनने से, नदियों का रास्ता बदलने से भूमि कटाव और बाढ़ों की समस्या हमारे सामने आ खड़ी हुई है।
- पृथ्वी पर एकत्रिक कूड़े-करकट के ढेर जब सड़ने लगते हैं तो उनसे ऐसी दुर्गंध आती है। कि हमारा जीवन दूभर हो जाता है यह दुर्गंध अनेक रोगों को जन्म देती है।
- भूमि के दुरुपयोग और नदियों और सागरों के किनारों को प्रदूषित करने से अनेक जीव-जन्तुओं को खतरा पैदा हो गया है।

- भूमि प्रदूषण का प्रभाव पेड़-पौधों पर भी पड़ा है। फलों और सब्जियों की गुणवत्ता में अंतर आने लगा है।
- पृथ्वी पर जंगलों के काटने से वन्य जीवन पर बड़े घातक प्रभाव हुए हैं। अनेक जंगली जानवर विलुप्त हो गये हैं। और कुछ के विलुप्त होने का खतरा पैदा हो गया है।

मृदा प्रदूषण का नियंत्रण (Control of Land Pollution)

- भूमि प्रबन्धन (Land Management) के अपनाना चाहिए।
- ठोस पदार्थों को गलाकर इसके चक्रीकरण (Cyclin) पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों का कम से कम प्रयोग करना चाहिए।
- ठोस तथा अनिम्नीकरण योग्य पदार्थों, जैसे- लोहा, तांबा, कांच, पॉलिथीन को मिट्टी में नहीं दबाना चाहिए।
- गोबर, मानव मल-मूत्र के बायोगैस के रूप में प्रयोग पर बल देना चाहिए।
- कीटनाशियों के स्थान पर जैव-कीटनाशियों के प्रयोग पर बल देना चाहिए।
- अपशिष्ट पदार्थों को ढेर के रूप में इकट्ठा करके और उसमें आग लगाकर गंदगी से छुटकारा पाया जा सकता है।
- मोटर वाहनों के टूटे हुए भागों को पुनः प्रयोग करने का तरीका बहुत प्रभावशाली है। कांच एल्यूमिनियम, लोहा, तांबा, आदि को पुनः पिघलाकर प्रयोग कर सकते हैं।
- मृदा अपरदन (Soil Erosion) को रोकने की विधियों का प्रयोग करना चाहिए।
- ठोस पदार्थों, जैसे-कागज, रबड़, गन्ने, चीथड़े आदि को जलाकर भूमि (मृदा) प्रदूषण पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है।
- कूड़े को जमीन में दबाकर उसमें मुक्ति पायी जा सकती है। दबा हुआ कूड़ा कुछ समय में मिट्टी में परिवर्तित हो जाता है।

जल प्रदूषण

- वस्तुतः जल प्रदूषण का अर्थ है-हानिकारक अनुपात में विजातीय सामग्री का जल में प्रवेश। जल (प्रदूषण निवारण

और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 में जल प्रदूषण की व्याख्या निम्नलिखित प्रकार से दी गयी है:

- “जल प्रदूषण से तात्पर्य जल के ऐसे संदूषण या जल के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसे परिवर्तन या जल में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मल-मूत्र या व्यावसायिक निःस्राव या किसी अन्य द्रव या ठोस पदार्थ के उत्सर्जन से है, जो लोक संकट उत्पन्न करे या कर सके या जो ऐसे जल का सार्वजनिक स्वास्थ्य या सुरक्षा के लिए या जलीय जीवों के जीवन या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक या क्षतिकर हों।

- **जल प्रदूषण के स्रोत (Sources of Water Pollution):** सामान्य जल प्रदूषण के दो स्रोत हैं।

1. **प्राकृतिक स्रोत (Natural Sources) :** प्राकृतिक रूप से प्राप्त जल में भी अशुद्धि होती है। प्राकृतिक रूप से जल में प्रदूषण धीमी गति से होता रहता है। प्राकृतिक स्रोतों का जल जहां बहकर आता है या जहां एकत्रित होता है, वहां यदि खनिजों की मात्रा अधिक होती है तो वे खनिज पानी में मिल जाते हैं। इनकी मात्रा में वृद्धि हो जाने से जल प्रदूषित हो जाता है।

2. **मानवीय स्रोत (Human Sources):** जल प्रदूषण के महत्वपूर्ण कारक मानवीय स्रोत हैं। इन स्रोतों में प्रमुख निम्न है-

- **औद्योगिक अपशिष्ट:** बड़ी-बड़ी औद्योगिक इकाइयां छोटे-छोटे कल-कारखाने, नदियों के जल का अधिकाधिक प्रयोग करके अपशिष्टों को पुनः नदियों नालों में डालकर जल को प्रदूषित करते हैं। फलस्वरूप सभी नदियां दूषित हो चली हैं। लखनऊ में गोमती का जल कागज और लुग्दी के कारखानों से निकले अवशिष्टों से दूषित होता है। तो दिल्ली में यमुना का जल डी.डी.टी. के कारखानों से निकाले पदार्थों से प्रदूषित होता है।

- **कृषि पदार्थ:** उर्वरक तथा कीटनाशक पदार्थों को खेतों में डालने से फसलों द्वारा कुछ मात्रा के प्रयोग कर लिए जाने के पश्चात् इनका अधिकांश भाग वर्षा के जल द्वारा बहकर नदी, नालों में मिल जाता है। और जल को दूषित करता है।

- **नाभिकीय ऊर्जा का प्रयोग:** नाभिकीय ऊर्जा के प्रयोग से वातावरण में असंख्य रेडियोधर्मी कण उत्पन्न हो जाते हैं। जो वर्षा का जल में घुलकर जल को प्रदूषित करते हैं।
- **फ्लाई ऐश:** देश में पर्याप्त मात्रा में ताप विद्युतघर हैं। जिनसे प्रतिदिन हजारों टन राख उत्पन्न होती है जो वर्षों तक जमीन पर पड़ी रहती है अथवा वर्षा के माध्यम से तालाबों एवं नदियों तक पहुँचती है। इस फ्लाई ऐश में लगभग सभी भारी धातुएं विद्यमान रहती हैं। जो धीरे-धीरे भूमि के अन्दर प्रवेश करती हैं। जिससे इनके आसपास के क्षेत्र का भूमिगत जल तथा सतही जल विषाक्त हो जाता है।
- **ईंधनों का जलना:** पेट्रोलियम, खनिज, कोयला तथा अन्य ईंधनों के जलने से वायु में सल्फर डाइऑक्साइड, कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड तथा अन्य गैसों वर्षा के जल में घुलकर अम्ल तथा अन्य लवण बनाकर जल को प्रदूषित करते हैं।
- **डिटर्जेंट्स तथा साबुन :** नहाने धोने, कपड़ा साफ करने में डिटर्जेंट्स साबुन का प्रयोग किया जाता है। इससे जल प्रदूषित होता है।
- **सीबेज :** मल-मूत्र कूड़ा-करकट आदि नदियों, तालाबों झीलों में छोड़ जाने से जल प्रदूषण बढ़ता है।
- **पर्यावरणीय कारकों का प्रभाव:** जल के पी. एच. मान, ऑक्सीजन तथा कैल्शियम की मात्रा पर जल प्रदूषण का प्रभाव पड़ता है, जस्ता तथा सीसा के प्रदूषित जल प्रायः जैव-सृष्टि से शून्य हो जाते हैं।
- **शैवालों को हानि:** निलंबित कणों के नदियों, तालाबों आदि के नाली में बैठने से वहां के शैवाल एवं अन्य जलीय पौधे समाप्त हो जाते हैं।
- **अन्य प्रभाव:** जल प्रदूषण के उपरोक्त प्रभावों के अतिरिक्त कुछ अन्य दुष्प्रभाव होते हैं, प्रदूषित जल से निर्मल जल के स्रोत नष्ट हो जाते हैं, अम्लीय प्रदूषक तत्वों की उपस्थित वाले जल से धातु निर्मित नलों व टंकियों में संक्षरण होता है, प्रदूषित जल जैसे सीवेज के विघटन से ज्वलनशील गैसों उत्पन्न होती हैं, प्रदूषित जल सिंचाई के लिए हानिकारक होता है, प्रदूषित जल के शोधन पर सरकार व गैर-सरकारी संस्थाओं एवं निजी व्यक्तियों को बहुत खर्च उठाना पड़ता है।

जल प्रदूषण पर नियंत्रण (Control on Water Pollution)

जल प्रदूषण के दुष्प्रभाव (Bad Effects of Water Pollution)

- **बीमारियां:** प्रदूषित जल के प्रयोग से नाना प्रकृति के रोगों की संभावना बनी रहती है। यथा-पक्षाघात, पोलियो, मियादी बुखार हैजा डायरिया, क्षयरोग, पेचिश, इंसैफलाइटिस, कनजक्टीवाइटिस, जॉडिस, आदि रोग फैल जाते हैं।
- **फसलों पर प्रभाव:** प्रदूषित जल से सिंचाई करने से फसलें खराब हो जाती हैं। इन फसलों, फूलों, सब्जियों आदि के प्रयोग से स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है।
- **जलीय जीवों की हानि:** जलीय जीव विष तथा अन्य प्रदूषकों को केवल न्यून मात्रा में ही सहन कर सकते हैं अन्यथा ये प्रदूषक इनके लिए घातक होते हैं। कुछ जीवों तथा मछलियों पर इसका प्रभाव शीघ्र पड़ता है।
- जल प्रदूषण को रोकने तथा काम करने के कुछ प्रमुख उपाय निम्नलिखित हैं:
- प्रत्येक घर में सेप्टिक टैंक होना चाहिए।
- शोधन (Purification) के पूर्व औद्योगिक अपशिष्टों (Industrial Waste Product) को लगाना चाहिए जिससे इनके द्वारा निकला जल शुद्ध होने के बाद जल स्रोतों में जा सके।
- समय-समय पर जल स्रोतों से हानिकारक पौधों को निकाल देना चाहिए।
- लोगों को नदी, तालाब, झील में स्नान नहीं करना चाहिए।
- कीटनाशकों (Insecticide), कवकनाशियों (Fungicides) इत्यादि के रूप में निम्नीकरण योग्य पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए।
- खतरनाक कीटनाशियों के उपयोग पर प्रतिबंध लगाना चाहिए।
- पशुओं के प्रयोग के लिए अलग जल स्रोत का प्रयोग करना चाहिए।

- ताप तथा परमाणु बिजलीघरों से निकलने वाले जल को ठंडा होने के बाद शुद्ध करके ही जल स्रोतों में छोड़ना चाहिए।
- कुछ मछलियां हानिकारक जंतुओं के लार्वा तथा अंडों को खाकर उनकी संख्या को कम करती हैं। इन्हें जल स्रोतों में पालना चाहिए, जैसे-गैम्बुशिया मछली मच्छर के अंडों व लार्वा का भक्षण करती है।
- कृषि कार्य में उर्वरकों व कीटनाशकों के प्रयोग पर नियंत्रण लगाना चाहिए।
- जल प्रदूषण के दुष्परिणामों से जनमानस को अवगत कराना चाहिए।
- सरकार व समाज मिलकर प्रदूषित जल की स्वच्छता संबंधी अभियान चलायें।
- आणविक विस्फोट से समुद्र को बचाना चाहिए।
- **सरकारी प्रयास (Govt- Measures):** जल प्रदूषण नियंत्रण के लिए भारत सरकार ने C.B.P.C.W.P. की स्थापना जल प्रदूषण नियंत्रण एवं निवारण अधिनियम के अंतर्गत की है। इसकी हर राज्य में शाखाएं भी स्थापित की गयी हैं। विभिन्न राज्यों की शाखाओं द्वारा प्रदूषण नियंत्रण के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्य किये जा रहे हैं:
 - जल स्रोतों के प्रदूषण स्तर का सर्वेक्षण।
 - औद्योगिक स्त्राव के निष्कासन का परीक्षण तथा उस पर निगरानी।
 - प्रदूषित जल के शोषण के उपायों की खोज।
 - स्थानीय निकायों को जल प्रदूषण नियंत्रण के लिए सुझाव देना।
 - प्रदूषण के प्रति आम जनता में जागरूकता पैदा करना।

वायु प्रदूषण

- वायु के अवयवों में जब अवांछित तत्व प्रवेश कर जाते हैं तो वायु का मौलिक संतुलन बिगड़ उठता है जो मानव व अन्य जीवधारियों के लिए घातक होता है। वायु के दूषित होने की प्रक्रिया 'वायु प्रदूषण' कहलाती है।

- **विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organisation)** ने वायु प्रदूषण (Air Pollution) को इस प्रकार परिभाषित किया है, वायु में विभिन्न पदार्थों की वह सांद्रता जो कि मानव एवं उसके पर्यावरण के लिए हानिकारक होती है, वायु प्रदूषण के अन्तर्गत आता है। वायु प्रदूषण सबसे सामान्य (Common) एवं सबसे हानिकारक (Harmful) पर्यावरण प्रदूषण है।

वायु प्रदूषण के प्रमुख स्रोत (Sources of Air Pollution)

प्रकृति में वायु प्रदूषण के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं:

मानवजनित स्रोत (Human Created Sources):

मानवजनित वायु प्रदूषण के निम्न स्रोत हैं-

- **औद्योगिक अपशिष्ट:** बड़े-बड़े औद्योगिक नगरों में चल रहे कल-कारखानों की चिमनियों से विभिन्न प्रदूषण-मोना ऑक्साइड, नाइट्रोजन, ऑक्साइड, विभिन्न प्रकार के हाइड्रोजन, धातुकण, विभिन्न फ्लोराइड आदि वायु में मिल जाते हैं।
- **वृक्षों की कटान:** पर्यावरण को शुद्ध करने में वृक्ष काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनके कटान से वायु प्रदूषित हो जाती है। मानसून प्रभावित होता है, समय से वर्षा नहीं होती है, अति वृष्टि तथा सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
- **कृषि रसायन:** फसलों पर कीटों और खरपतवारों को नष्ट करने के लिए छिड़के जाने वाले रसायन, आर्सेनिक तथा सीसा वायु में प्रदूषण के रूप में पहुंचने हैं।
- **धातुकर्मी प्रक्रम:** विभिन्न धातुकर्मी प्रक्रमों से जो धुआं निकलता है उसमें सीसा, कोमियल, बेरीलियम, निकिल, आर्सेनिक तथा वेनेडियम जैसे वायु प्रदूषण उपस्थित रहते हैं।
- **परमाणु ऊर्जा:** आणविक प्रक्रियाओं में विभिन्न प्रदूषक यूरेनियम, बेरीलियम, क्लोराइड, आयोडीन, आर्गन, स्ट्रॉशियम, सीजियम तथा कार्बन निकलते हैं आर ये वायु में मिलकर उसे प्रदूषित करते हैं।
- **दहन:** भट्टियों, कारखानों, बिजलीघरों मोटर गाड़ियों या रेलगाड़ियों में ईंधनों के जलने से कार्बन डाइऑक्साइड,

सल्फर डाइऑक्साइड अधिक मात्रा में वायु में पहुंचती है। मोटर गाड़ियों से अधूरा जला हुआ ईंधन वायु में पहुंचता है। जो धूप के प्रभाव से ओजोन तथा अन्य प्रदूषकों के रूप में वायु में मिल जाता है।

प्राकृतिक जनित स्रोतों (Nature-generated Sources):

प्राकृतिक स्रोतों से उत्पन्न वायु को प्रदूषित करने वाले प्रदूषकों के निम्न प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है-

- **ज्वालामुखी के उद्गार से उत्पन्न प्रदूषक:** धूल, राख, धूम्र, कार्बन डाइऑक्साइड, हाइड्रोजन तथा अन्य गैसों।
- **पृथ्वीय स्रोत से उत्पन्न प्रदूषक:** कामेट, अस्टरायड, मीटीयर, आदि के पृथ्वी के टक्कर के कारण उत्पन्न कास्मिक धूल, आदि।
- **हरे पौधों से उत्पन्न प्रदूषक:** पौधों की पत्तियों से वाष्प, फूलों के पराग, पौधों के श्वसन द्वारा निर्मुक्त कार्बन डाइऑक्साइड, वनों में आग लगने से उत्पन्न कार्बन डाइऑक्साइड बैक्टीरियों से निर्मुक्त कार्बन डाइऑक्साइड आदि।
- **स्थलीय सतह से उत्पन्न प्रदूषक:** धरातलीय सतह से उड़ायी गयी धूल तथा मिट्टियों के कण, सागरों तथा महासागरों से लवण फुहार (Salt of Spray) आदि।

वायु प्रदूषण के प्रभाव (Effects of Air Pollution)

- वायु प्रदूषण के प्रभाव का निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत अध्ययन कर सकते हैं।
- धूल तथा मिट्टी के कणों के वायु में उपस्थित रहने से श्वसन की क्रिया में बाधा आती है। ये कण फेफड़ों में जाकर बीमारियां उत्पन्न करते हैं।
- पेट्रोल और डीजल के वाहनों द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड और टेट्रा मेथिल लेड आदि जिनको श्वसन में लगातर लेने से कैंसर एवं क्षय आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।
- वायु में रेडियो ऐक्टिव विकिरण भी मिश्रित है जो कि स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है।
- जिन कारखानों से गैसों निकलती हैं- Cl_2 , NH_3 , SO_2 , DO_2 इनसे आंखों में जलन होती है एवं गले के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

■ वायुमंडल में धुआं तथा धूल के कण से जुकाम, खांसी, दमा, एवं टी. बी. आदि रोग हो जाते हैं। एल्यूमिनियम तथा सुपर फॉस्फेट उत्पन्न करने वाले कारखानों से निकलने वाली गैसों से दांतों और हड्डियों के रोग हो जाते हैं।

■ वायु प्रदूषण से पौधों को भी बहुत हानि होती है। सल्फर डाइऑक्साइड तो पौधों को बिलकुल मृत कर देती है।

■ वन अनियंत्रित रूप से कट रहे हैं और हमें पर्याप्त ऑक्सीजन न मिल पाने के कारण स्वास्थ्य गिर रहा है।

वायु प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय (Measures to Control Air Pollution)

वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाये जाते हैं-

- अपशिष्ट गैसों और धुएं के वायुमंडल में पहुंचने के पूर्व ही उनमें इतनी ऑक्सीजन मिला दी जाये कि उनमें उपस्थित पदार्थ का पूरा ऑक्सीकरण हो जाये ताकि प्रदूषण कम हो जाये।
- जिन ईंधनों का प्रयोग किया जाये, वह ऐसा हो कि दहन प्रक्रिया के दौरान उसका ऑक्सीकरण पूर्ण हो जाये, ताकि कम से कम धुआं और दूषित गैसों बाहर निकलें।
- छोटे तथा बड़े सभी कल- कारखानों को नगरों से बहुत दूर स्थापित करना चाहिए।
- बड़े नगरों में घरों के समीप पौधे लगाना चाहिए क्योंकि पौधे हमारे पर्यावरण को शुद्ध करते हैं।
- अधिक धुआं देने वाले वाहनों पर प्रतिबंध लगाना चाहिए। वाहनों को खड़ा रखकर इंजन चलाने पर भी प्रतिबंध लगाना चाहिए।
- वनों की कटाई को रोककर वृक्षारोपण (Plantation) पर विशिष्ट ध्यान देना चाहिए।
- वाहनों के लिए उपयुक्त ईंधन उचित मात्रा में प्रयोग किया जाना चाहिए। समय-समय समय पर दहन ईंधन का परीक्षण किया जाना चाहिए।
- अपशिष्ट पदार्थ युक्त बड़े कणों को उपयुक्त छत्ते लगाकर वायुमंडल में फैलने से रोकना चाहिए।

- वायु प्रदूषण से मानव शरीरों पर पड़ने वाले घातक प्रभावों से आम जनता को परिचित कराया जाना चाहिए।
- वायु प्रदूषकों को ऊपरी वायुमंडल में विसरित एवं प्रकीर्ण करने के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए ताकि धरातलीय सतह पर इन प्रदूषकों का सान्द्रण कम हो जाये।
- मानव समाज को आसाध्य क्षति पहुंचाने वाले घातक तथा आपदापन्न वायु प्रदूषण को पूर्णतया समाप्त किया जाना चाहिए।
- कम हानिकारक उत्पादों की खोज की जानी चाहिए, यथा-सौर-चालित मोटर कार।
- ग्लोबल वार्मिंग के संबंध में गत वर्ष 100 से अधिक देशों के वैज्ञानिकों तथा सरकारी प्रतिनिधि मंडलों “इंटर गवर्नमेंटल पैनल” द्वारा तैयार नवीनतम रिपोर्ट में कहा गया है। कि हमारी पृथ्वी की सतह का औसत तापमान 20वीं शताब्दी के 100 वर्षों में लगभग 0.8 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ने की संभावना है। इस रिपोर्ट में बताया गया है कि वर्ष 1750 में हुई औद्योगिक क्रांति के प्रारंभ के समय से अब तक वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की सघनता में 31 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस अवधि में वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा प्रति 10 लाख में 289 भाग से बढ़कर अब 367 भाग में हो गयी है।

वायु से प्रभावित समस्याएं (Air Prone Problems)

- वायु से संबंधित चार प्रमुख समस्याएं निम्न हैं। विश्व तापन (Global Warming), अम्लीय वर्षा (Acid Rains), ओजोन पर्त की क्षीणता (Ozone Layer Depletion), स्मॉग (Smog)।
- **विश्वतापन या ग्लोबल वार्मिंग (Global Warming):** सामान्य परिस्थितियों में (जब वातावरण में CO_2 की सांद्रता सामान्य होती है) पृथ्वी की सतह का तापमान उस पर पड़ने वाली सौर ऊर्जा एवं पृथ्वी के द्वारा परावर्तित सौर ऊर्जा के द्वारा नियंत्रित किया जाता है। परंतु जब वातावरण में CO_2 की सांद्रता में वृद्धि होती है तो इसकी मोटी परत परावर्तित होने वाली ऊष्मा (Heat) या ऊर्जा को वायुमंडल से बाहर नहीं जाने देती है जिसके कारण पृथ्वी के वातावरण का तापमान ठीक उसी प्रकार बढ़ जाता है। जिस प्रकार हरित गृह (Green House) में तापमान में वृद्धि हो जाती है।
- हरित गृह या ग्रीन हाउस कांच या प्लास्टिक की दीवारों और छत से बने अंडाकार या बेलनाकार छोटे बड़े आकार के ऐसे घेरे हैं जिनमें सूर्य की किरणें तो प्रवेश कर जाती हैं लेकिन वे बाहर नहीं निकल पाती। इससे इन ग्रीन हाउसों के अंदर का तापमान बढ़ जाता है ग्रीन हाउसों में उत्पन्न ये गैसें (कार्बन डाइऑक्साइड रूमोग गैसें भी केन सहित) वातावरण में गैसों की एक ऐसी चादर-सी तान देती हैं जिससे गर्मी पृथ्वी के वातावरण में अंतरिक्ष में वापस नहीं जा पाती और इससे पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है।
- यद्यपि बढ़ते तापमान से संबंध दुष्प्रभावों के कुछ लक्षण तो दिखने लगे हैं किंतु भविष्य अत्यंत भयावह हो सकता है। निम्न बिंदु इसी तथ्य को स्पष्ट करते हैं।
- तापमान बढ़ने के कारण ध्रुवीय क्षेत्रों तथा पहाड़ों की बर्फ पिघलने के कारण समुद्र के जल-स्तर में 15 से 95 सेमी की वृद्धि हो सकती है। इससे विश्व के टोगा टोबैगों तथा मालदीप जैसे द्वीपीय देशों के सामने तो अस्तित्व का संकट होगा ही, बांग्लादेश, नार्वे, ब्रिटेन आदि के भी बड़े हिस्से जलमग्न हो जायेंगे।
- गंगोत्री जैसे समृद्ध ग्लेशियरों का अस्तित्व खतरे में है। यदि यही क्रम बरकरार रहा तो भारत और बांग्लादेश के समृद्ध कृषि क्षेत्र भी भयंकर अकाल की चपेट में आ जायेंगे।
- ऊष्मायन तथा दाब की स्थितियों में परिवर्तन के कारण मानसूनी चक्र में परिवर्तन होने से फसल चक्र के टूटने तथा कृषि क्षेत्रगत बीमारियों का प्रकोप बढ़ने की आशंका है। यदि ऐसी स्थिति बनी रहें तो संभव है कि संपूर्ण विश्व अकाल की चपेट में आ जाये है।
- रेगिस्तानी क्षेत्र और गर्म हो जायेंगे तथा ध्रुवीय क्षेत्रों में शीत का प्रकोप बढ़ जायेगा और जंगलों में पायी जाने वाली विभिन्न जीव एवं वनस्पति प्रजातियां विलुप्त हो जायेंगी।
- ताप वृद्धि के कारण परजीवी आधारित बीमारियां (Vector Borne Diseases), जैसे- मलेरिया, फाइलेरिया, डेंगू इत्यादि अनियंत्रित होकर महामारी का रूप ले सकती हैं।